चकमक

जून, 1992 बाल विज्ञान पत्रिका रु. 5.00

सोनिका शर्मा, कटनी

आपस की बात

विभिन्न कारणों से चकमक के फुटकर मूल्य तथा वार्षिक चंदे की दर में वृद्धि करने का निर्णय लेना पड़ रहा है।

जून, 1992 यानी इस माह से चकमक की एक प्रति का दाम रु. 5.00 होगा। वार्षिक चंदा रु. 50.00 तथा अर्धवार्षिक रु. 25.00 होगा। डाक व्यय मुफ़्त!

❑ संपादक

चकमक

मासिक बाल विज्ञान पत्रिका

वर्ष-7 अंक 12 जून, 1992

संपादक
विनोद रायना

सह-संपादक
राजेश उत्साही
कविता सुरेश

संपादन सहयोग
टुलटुल विश्वास

कला-सज्जा
जया विवेक

उत्पादन/वितरण
कमलसिंह

चकमक का चंदा

एक प्रति : पांच रुपए
छमाही : पच्चीस रुपए
वार्षिक : पचास रुपए
डाक खर्च मुफ्त
चंदा, मनीआर्डर या बैंक ड्राफ़्ट से एकलव्य के नाम पर भेंजे।
कृपया चेक न भेजें।

पत्र/चंदा/रचना भेजने का पता
एकलव्य,
ई-1/208, अरेरा कॉलोनी,
भोपाल-462 016 (म.प्र.)
फोन : 563380

कागज़ : यूनिसेफ के सौजन्य से।

इस अंक में

विशेष

7 ❑ प्रकृति किसी की बपौती नहीं है।
12 ❑ सत्यजित राय
22 ❑ अंतरिक्ष में भारत के बढ़ते कदम

कहानी

30 ❑ खोज, आदमी की

कविताएं

6 ❑ ज्योतिषी
20 ❑ ट्रैफ़िक जाम

हर बार की तरह

2 ❑ मेरा पन्ना
11 ❑ हमारे वृक्ष-4
18 ❑ खेल कागज़ का
26 ❑ खेल पहेली
27 ❑ चित्रकथा
28 ❑ माथा पच्ची
40 ❑ एक मज़ेदार खेल

आवरण : विवेक

एकलव्य एक स्वैच्छिक संस्था है जो शिक्षा, जनविज्ञान एवं अन्य क्षेत्रों में कार्यरत है। चकमक, एकलव्य द्वारा प्रकाशित अव्यवसायिक पत्रिका है। चकमक का उद्देश्य बच्चों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति, कल्पनाशीलता, कौशल और सोच को स्थानीय परिवेश में विकसित करना है।

चार कहानियां

॥एक॥

मुझे और मेरे दोस्त को पैसों से खेलने की आदत पड़ गई थी। एक दिन मैं और मेरा दोस्त पैसों से खेलने लगे और हम स्कूल देर से पहुंचे। मेरे कुछ दोस्तों ने सर से कह दिया कि हम पैसों से खेल रहे थे। सर ने मेरी और मेरे दोस्त की ख़ूब पिटाई की। जब यह बात मेरे भैया तक पहुंची तो उन्होंने भी मुझे ख़ूब पीटा। जब मैं अपने दोस्त के घर गया तो मैंने देखा कि मेरे दोस्त की पिटाई हो रही है। उसके भैया को भी पता चल गया था।

॥दो॥

यह उस समय की बात है जब मैं नाना जी की भैंसें चराता था। उनमें एक पड़ा भी था। मैं पड़े पर बैठ जाता था। एक दिन मैं उस पर बैठा था और वो एक झील में जा बैठा। झील में कमल खिलते थे। मैंने एक फूल तोड़ लिया। वह पड़ा रोज़ जाकर उस झील में बैठता था। उस पर मुझे बहुत मज़ा आता था।

एक दिन पड़ा झील में से निकलकर बहुत ज़ोर से भागा और मैं गिर पड़ा। तब मेरे नाना जी भी आ गए। उन्होंने पूछा कि क्या हुआ? मैंने कहा पड़े से गिर पड़ा। इस पर वे बहुत नाराज़ हुए।

मुकेश कुमार कुशवाहा, करकटी, शहडोल

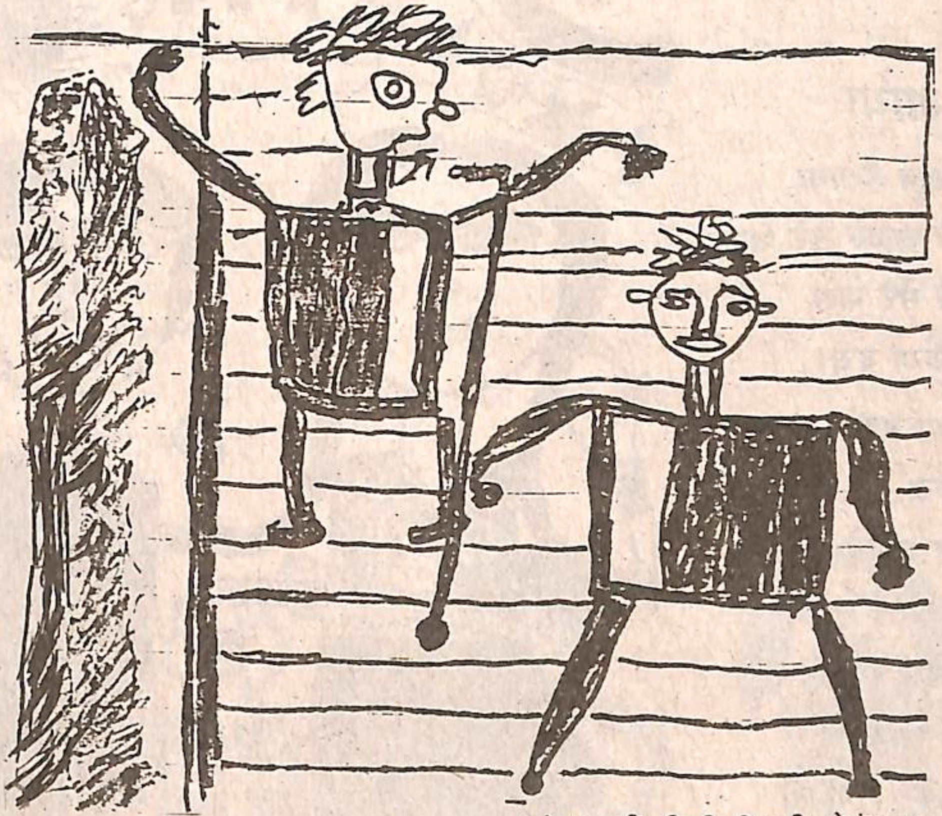

राजेश कुमारी, तीसरी, टिमरनी, होशंगाबाद

॥तीन॥

मेरा एक दोस्त किसी न किसी बहाने मुझे सर से पिटवाया करता था और हँसता था। एक दिन वह मुझसे बोला, "मेरा यह पेन पकड़ना मैं अभी आता हूं।"

जाकर सर से बोला, "सर उसने मेरा पेन चुरा लिया है।" सर ने मुझे एक संटी मारी और कहा, "इसका पेन क्यों चुराया है?"

मैंने कहा, "मैंने नहीं चुराया। इसने खुद पकड़ाया था।"

मेरे दूसरे दोस्तों ने भी कहा कि इसने खुद पकड़ाया था। सर ने उसे खूब मारा। वह मुंह लटका कर बैठ गया। हम छुट्टी के बाद खूब हंसे और उसे चिढ़ाने लगे।

॥चार॥

यह उस समय की बात है जब मैं अपने नाना जी के यहां रहता था। उस समय मैं छोटा था और नटखट भी। मेरे पड़ोस में एक आदमी का गन्ने का खेत था। मैं रोज़ जाकर एक गन्ना चोरी से ले आता था। एक दिन गन्ने वाले ने देख लिया। मैं गन्ना छोड़ भाग निकला। फिर एक दिन मैं चुपके से गन्नों में घुस गया। मुझे मालूम नहीं था कि गन्ने वाला आदमी गन्ने में छिपा हुआ था। मैं गन्ना लेकर निकला तो उसने मुझे पकड़ लिया और मुझे घसीटता हुआ नाना जी के पास ले आया। नाना जी मुझ पर बहुत गुस्सा हुए और उन्होंने मुझे पीटा भी।

❑ दलजीत सिंह सिक्ख, सोलह वर्ष, गढ़ी बरौद, शिवपुरी

चंदा आया

चंदा आया, खूब हँसाया
बोला, "बच्चो आओ मेरे पास,
अगर आओगे मेरे पास
तो दूंगा टॉफ़ियां दस।
दौड़े-दौड़े आए बच्चे
चांद के निकट
सिर उठाकर उसने देखा
गले लगाया झट।
बहुत खेल खेले उन्होंने
खूब जी भर खाया
जब दिन ढलने लगा तो
चांद घर को लौट आया।

❑ वन्दना जेम्स, भिलाई

मनीष शर्मा, चौथी, आगर मालवा, शाजापुर

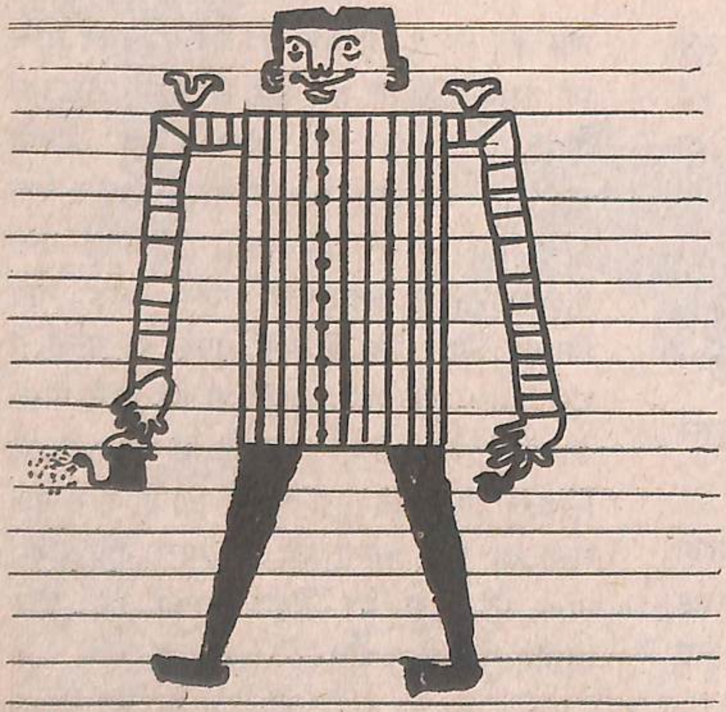
विष्णु कुमार, छठवीं, चांसिया

होटल वाला

मैं होटल वाला हूं
सबको चाय पिलाता हूं
मैं सबसे पैसे लेता हूं
अपने घर का काम चलाता हूं
मेरी होटल पे स्पेशल चाय बनती है
स्पेशल चाय सब पीते हैं
चाय पीकर चले जाते हैं।

❑ विष्णु कुमार पाटीदार, छठवीं, चांसिया, देवास

पचमढ़ी यात्रा

एक बार मैं अपनी मम्मी के साथ पचमढ़ी गई। मेरे साथ बहुत-से लोग थे। मेरा एक दोस्त चीनू भी मेरे साथ था। हम जंगल के बीच में तंबू लगाकर ठहरे थे, लेकिन वहां जानवर नहीं थे। हम और चीनू एक सूखे नाले में उतर गए। वहां की रेत से हमने छोटे-छोटे घर बनाए। हम आगे चले तो सामने कीचड़ थी। हम कूद कर उसके पार निकल गए। लेकिन लौटते समय हमारे पैर दुखने लगे थे। हम कीचड़ पार नहीं कर पा रहे थे। इतने में चीनू फिसल कर कीचड़ में गिर गया। उसे कीचड़ से निकालने के चक्कर में मैं भी कीचड़ में गिर गई। कैसे भी करके हम कीचड़ से तंबू तक पहुंचे। हमारी मम्मी तब मीटिंग में थी। चीनू को अपने जूते फेंकने पड़े जो उसने कीचड़ कांड वाले समय पहने थे। और मेरी जूतियां पूरी फट गईं।

❑ सौम्या सुरेश, ग्यारह वर्ष, भोपाल

सुधीर श्रीवास्तव, सातवीं, खमरिया, जबलपुर

ज्योतिषी

चश्मा माथे पर रखकर
दृष्टि जमा कर पोथी पर
बोले पंडित राम लुभाया
'क्या जोड़ा विधि ने बैठाया
इससे बढ़कर लगन महूरत
कोई और नहीं शम्भू दत!
तुम बेटे का ब्याह करा लो
देखो अब यह काम न टालो
मेरा मुंह मीठा करवाओ
मन भर रस गुल्ला मंगवाओ
सौ पचास रुपए भी लाओ
देवी का परसाद चढ़ाओ।'
यह सुन बोला शम्भू दत्त
आ हा धत्तेरे की छत्त।
'बेटा कहां हमारे घर
मैं तो खुद अनब्याहा वर।'

❑ निरंकारदेव 'सेवक'

चित्र : आशीष रानडे

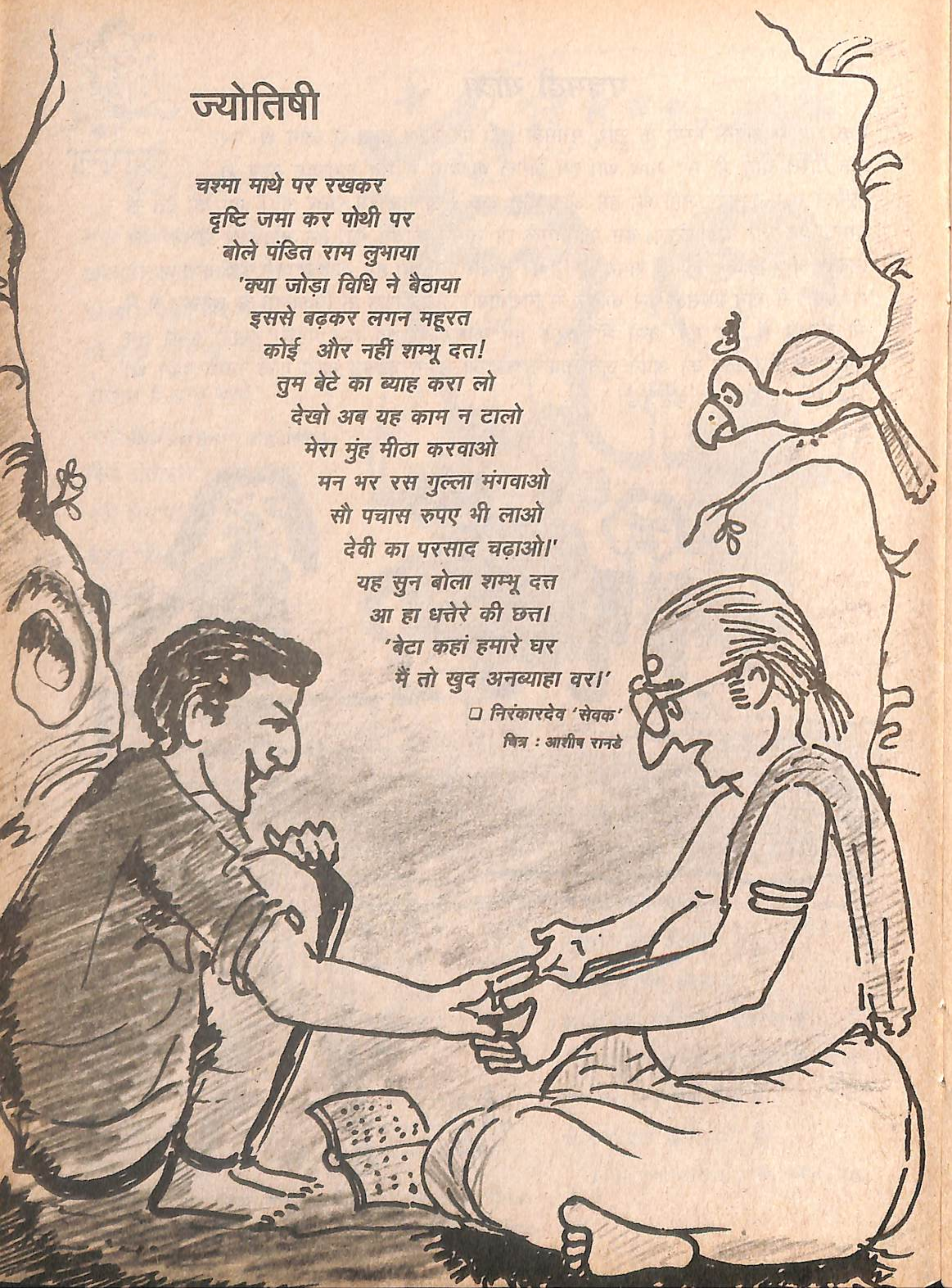

प्रकृति किसी की बपौती नहीं है!

न्यूटन ने गुरूत्वाकर्षण का सिद्धांत खोजा था, यह बात तो सभी जानते हैं। उसने बताया था कि संसार की हर चीज़ एक-दूसरे को आकर्षित करती है। इसी खिंचाव के कारण पृथ्वी के आसपास की चीज़ें देर-सबेर पृथ्वी पर गिर जाती हैं। जब न्यूटन ने यह सिद्धांत खोज निकाला, उससे पहले भी चीज़ें पृथ्वी पर गिरती थीं। पेड़ों से सेब और दूसरे फल भी धरती पर ही गिरते थे। एक-दूसरे को आकर्षित करना तो हर चीज़ का कुदरती गुण है। न्यूटन के पहले भी चीज़ें एक-दूसरे को आकर्षित करती थीं और न्यूटन के बाद भी।

मान लो न्यूटन कहता कि अब कोई भी चीज़ पृथ्वी पर गिरने से पहले उसकी अनुमति ले। याने न्यूटन की मर्ज़ी के बग़ैर कोई चीज़ धरती पर नहीं गिर सकती। और यदि कोई व्यक्ति किसी चीज़ को धरती पर गिराना चाहे, तो उसे न्यूटन से अनुमति लेना पड़ेगी। न्यूटन हर चीज़ के गिरने की फ़ीस लेता। ज़रा सोचो, तब क्या होता।

जैसे तुमने इमली तोड़ने के लिए पेड़ पर पत्थर मारा। अब न पत्थर वापिस आएगा, न इमली गिरेगी। पहले जाकर न्यूटन के ऑफ़िस में फ़ीस भरकर आओ। क्रिकेट का खेल होगा। किसी खिलाड़ी ने छक्का जमा दिया तो गेंद तभी आएगी जब न्यूटन कहेगा। इसे हम 'गिरने की रायल्टी' कहते। इस तरह न्यूटन और उनके बच्चे, और बच्चों के बच्चों के बच्चे भी हर चीज़ के गिरने की रायल्टी वसूल करते रहते। क्या अजीब दुनिया होती।

पर तुम कहोगे कि ऐसा भी कहीं होता है। धरती पर गिरना तो चीज़ों का गुण है। इस गुण पर किसी का हक थोड़े ही है। मुझे भी ऐसा ही लगता है। प्रकृति, उसके जीव-जंतु, पेड़-पौधे, सजीव-निर्जीव वस्तुएं किसी की बपौती नहीं हैं। इस प्रकृति में पाई

जाने वाली सारी चीज़ें हम सबकी सामूहिक पूंजी हैं। इस प्रकृति को चलाने वाले नियम हम सब पर लागू होते हैं। परंतु कुछ लोगों के दिमाग़ थोड़े अलग से चलते हैं। उन्हें लगता है कि प्रकृति उन्हीं की बपौती है। आजकल यह बात ज़रा ज़्यादा ही बढ़ गई है।

पहले तो लोग क्या करते थे कि जब वे कोई नया उपकरण या यंत्र या नई दवा आदि का आविष्कार करते थे, तो कहते थे कि इसके लिए मुझे पैसा मिलना चाहिए। कोई भी व्यक्ति यदि उस उपकरण या यंत्र या दवा वग़ैरह का इस्तेमाल करना चाहे, तो उसके आविष्कारक को कुछ पैसा दे। मतलब वह आविष्कार उस व्यक्ति के नाम दर्ज़ हो जाता था। इस तरह से दर्ज़ कराने की प्रथा को पेटेंट कराना कहते हैं।

मैंने कोई नई दवा खोज निकाली या अपनी चीज़ प्रयोगशाला में बना ली, तो मैं उसे अपने नाम पेटेंट करवा सकता हूं। अब यदि कोई कंपनी उस दवा को बनाकर बेचना चाहे, तो मुझसे अनुमति लेनी होगी। अनुमति तो मैं दे दूंगा परंतु बदले में उनसे कुछ पैसा वसूल करूंगा। अब वह पेटेंट कंपनी के नाम हो जाएगा। अब वही कंपनी यह दवा बना सकती है। कोई और कंपनी यदि इस दवा का उत्पादन करेगी, तो उस पर जुर्माना होगा। परंतु पेटेंट एक निश्चित समय तक ही लागू रहता है। मान लो यह निश्चित समय पंद्रह साल का है तो पंद्रह साल बाद कोई भी कंपनी उस दवा को बना सकती है। इसके लिए अनुमति की ज़रूरत नहीं होगी।

ऐसा कहते हैं कि पेटेंट की प्रथा से लोगों को नए-नए आविष्कार करने की प्रेरणा मिलती है। आख़िर अविष्कार करके उस व्यक्ति को आर्थिक लाभ जो होता है।

अलग-अलग देशों में पेटेंट के कानून अलग-अलग हैं। जैसे कई सारे विकसित देशों (ख़ासकर अमेरिका) में पेटेंट कानून कुछ विचित्र क़िस्म का है। वहां ऐसा होता है कि एक चीज़ का एक ही पेटेंट हो सकता है। मतलब यदि किसी

व्यक्ति या कंपनी ने कोई एक दवाई (जैसे सेप्ट्रान) बना ली और पेटेंट ले लिया, तो अब कोई दूसरा व्यक्ति सेप्ट्रान नहीं बना सकता। कई बार ऐसा होता है कि एक ही चीज़ को अलग-अलग तरीक़े से बना सकते हैं परंतु अमरीका में इस बात को नहीं माना जाता। वहां का कानून तो यही कहता है कि बस एक चीज़ एक पेटेंट। इस कानून की वजह से क्या होता है कि वहां एक बार एक चीज़ बन गई, तो बाकी लोग नई-नई विधियों की तलाश करना बंद कर देते हैं। इसके कारण कई बार नई-नई खोज करने की प्रेरणा मर जाती है।

भारत का कानून थोड़ा अलग है। हमारे यहां ऐसा नियम है कि चीज़ को बनाने के तरीक़े पर पेटेंट मिलता है। यदि एक कंपनी ने कोई दवाई एक तरीक़े से बना ली तो निराश होने की ज़रूरत नहीं है। अब उस तरीक़े से कोई और वह दवा न बना सकेगा। परंतु यदि किसी ने कोई नया तरीक़ा ढूंढ निकाला, तो उस पर नया पेटेंट मिल जाएगा। मतलब हमारे यहां एक ही चीज़ पर एक से ज़्यादा पेटेंट भी हो सकते हैं। इसकी वजह से नई-नई खोज की प्रेरणा बनी रहती है। इसकी वजह से उसी चीज़ को बनाने के सस्ते तरीक़े मिलने की भी गुंजाइश रहती है।

फिर पेटेंट के मामले में एक बहुत ही दिलचस्प घटना हुई। इस घटना ने पेटेंट का रुतबा ही बदल डाला। इसी घटना की वजह से मेरे दिमाग़ में यह सवाल उठा कि, क्या न्यूटन अपने गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत का पेटेंट करवा सकता है? घटना इस प्रकार है। एक वैज्ञानिक ने प्रयोगशाला में अनुसंधान के द्वारा एक ऐसे बैक्टीरिया का "निर्माण" कर लिया जो पेट्रोल पचा सकता था। उस वैज्ञानिक का नाम है आनंद चक्रवर्ती और वह अमरीका का नागरिक है। पैट्रोल पचाने वाले इस बैक्टीरिया का बड़ा महत्व है। समुद्र में जहाज़ वगैरह के कारण काफ़ी पेट्रोल छलक जाता है। उसे साफ़ करने में इस बैक्टीरिया का उपयोग हो सकता है। आनंद चक्रवर्ती ने इस बैक्टीरिया का पेटेंट प्राप्त करने के लिए दरखास्त दे दी। पेटेंट ऑफ़िस ने तो मना कर दिया कि हमारे यहां किसी जीव-जंतु का पेटेंट कराने का नियम नहीं है। परंतु आनंद चक्रवर्ती कब मानने वाला था। उसने कोर्ट में नालिश कर दी और अंततः अमरीकी अदालत ने उसे बैक्टीरिया का पेटेंट दे ही दिया।

बड़ी अजीब बात है। बैक्टीरिया तो प्रकृति में होते हैं। वे एक किस्म के जीव हैं। क्या कोई जीव पेटेंट कानून के दायरे में आ सकता है? आनंद का तर्क था कि उसने एक ऐसा बैक्टीरिया "बनाया" है जो प्रकृति में नहीं मिलता। उसने प्रकृति में मिलने वाले बैक्टीरिया के गुणों में बदलाव कर दिया है। इसलिए यह एक नई वस्तु है। यह उसका आविष्कार है। परंतु एक बात और है, जिसे आनंद चक्रवर्ती ने भुला दिया। यदि प्रकृति में यह गुण पहले से मौजूद न होता तो, वह इसका निर्माण नहीं कर सकता था।

ख़ैर, बैक्टीरिया यानि एक जीवधारी का पेटेंट मिलते ही इतिहास में नया मोड़ आया। इस बात पर बहस चल निकली कि क्या किसी भी जीवधारी में इस तरह से फेरबदल करके उसका पेटेंट कराया जा सकता है? दूसरे शब्दों में कहें, तो सवाल यह है कि क्या प्रकृति का ख़ज़ाना किसी की

बपौती है? और प्रकृति के ख़ज़ाने में तो कई गुण मौजूद हैं। इन गुणों को जोड़-तोड़कर क्या हम उस पर अपना एकाधिकार कायम कर सकते हैं?

अभी तक इस तरह के अनुसंधान छोटे-छोटे जीवों पर ही हो पाए हैं। किंतु जिस ढंग से विज्ञान का कारोबार चल रहा है, उससे तो ऐसा लगता है कि वह दिन दूर नहीं जब बड़े जीव-जंतुओं पर भी ऐसे ही प्रयोग होने लगेंगे।

इस मामले में फ़सलों का उदाहरण सबसे अजीब है। 1950 और 1960 के बीच वैज्ञानिकों ने ऐसी संकर फ़सलें बनाई थीं जिनकी पैदावार बहुत ज़्यादा थी। अब वैज्ञानिक लोग इस कला में माहिर हो गए हैं। उनके पास अब नई-नई तकनीकें हैं। इनके द्वारा वे फ़सलों में मनचाहे परिवर्तन करते हैं। अब इन फ़सलों का भी पेटेंट हो रहा है। याने अब गेंहू-चावल का भी पेटेंट करवाया जाएगा। मतलब यदि गेहूं की किसी क़िस्म (जैसे कल्याण सोना या लोकवन) में कोई वैज्ञानिक या कंपनी ऐसा परिवर्तन कर दे जिससे उस पर फफूंद न लगे, तो गेहूं की उस नई क़िस्म पर उसी कंपनी का अधिकार हो जाएगा। अब वह चाहे तो आप उसे उगा सकते हो, और न चाहे तो नहीं उगा सकते। अब सबसे बड़ी बात तो यह है कि गेहूं की उस क़िस्म का इस्तेमाल तुम अपनी मर्ज़ी से नहीं कर सकते। उस कंपनी से अनुमति लेनी होगी।

सबसे अजीब बात यह है कि गेहूं या चावल की नई क़िस्म के सारे "नए गुण" वास्तव में प्रकृति में पहले से मौजूद थे। वैज्ञानिक या कंपनी ने तो सिर्फ़ इतना ही किया कि उन्हें एक जगह इकट्ठा कर दिया। दुनिया भर के किसान हज़ारों सालों से खेती करते आ रहे हैं। खेती करने के दौरान उन्होंने फ़सलों की नई-नई क़िस्में विकसित की। किसी किसान ने आज तक यह नहीं कहा कि अमुक फ़सल मेरी है। किसानों ने कभी यह नहीं कहा कि फलां फ़सल बोने से पहले उनकी अनुमति लेनी पड़ेगी। परंतु आज कई कंपनियां ऐसा करने लगी हैं। सामूहिक चीज़ों को वे अपनी बपौती समझने लगी हैं।

आजकल दुनिया के सारे देशों पर दबाव पड़ रहा है कि वे अपने-अपने पेटेंट कानून ठीक वैसे ही बना लें, जैसे कि अमरीका में हैं। याने प्रकृति पर कंपनियों का अधिकार मंज़ूर कर लें।

यदि प्रकृति पर ऐसा एकाधिकार मंज़ूर कर लें, तो वह दिन दूर नहीं जब न्यूटन, आर्किमिडिज़, पाश्चर के वंशज अपना-अपना अधिकार जताने लगेंगे। खुदा वह दिन न दिखाए।

❑ सुशील जोशी

व्यंग्य चित्र : शिवेन्द्र पांडिया

इमली

इमली के पेड़ से तुम परिचित होगे ही। इमली के पेड़ के नीचे तुमने खूब खेल खेले होंगे। खट्टी-मीठी इमली भी खाई होगी।

इमली का वृक्ष देश के सभी हिस्सों में पाया जाता है। वास्तव में यह वृक्ष मध्य अफ्रीका का निवासी है। वहीं से यह भारत आया। और अब तो इसकी गिनती देश के जाने-माने वृक्षों में होती है।

इमली का पेड़ 80 से लेकर 100 फुट तक ऊंचा होता है। इसकी शाखाएं घनी होकर फैला हुआ छत्र-सा बनाती हैं।

इसकी आयु काफी अधिक होती है। कहते हैं आज से सैकड़ों साल पहले वृंदावन में जिस इमली के पेड़ के नीचे आकर महाप्रभु चैतन्य बैठे थे, वह अब भी वहां मौजूद है।

इमली में एक साथ पतझड़ नहीं होता, इसलिए यह साल भर भरी-पूरी और हरी बनी रहती है। इसकी पत्तियां 2 से 5 इंच लंबी होती हैं। उसमें भी छोटी-छोटी पंक्तियों के दस से बीस जोड़े होते हैं। पत्ते वास्तव में इतने छोटे होते हैं कि कुछ इलाकों में 'इमली के पत्ते पर खिलाना' एक मज़ाक ही बन गया है। नए पत्ते साल भर बारी-बारी से निकलते रहते हैं।

इमली के फूल छोटे-छोटे होते हैं तथा देखने में सुंदर लगते हैं। फूलों में पीले और लाल रंगों की मिलावट होती है। फूल अप्रैल से जून तक खिलते हैं।

फल फ़रवरी से अप्रैल यानी ठंड के मौसम में पकते हैं। फलों का आकार एक-सा नहीं होता है। कोई लंबा, कोई हंसिए के आकार का और कोई चिपटा हुआ छोटा-सा होता है। शुरू में फल हरे रंग के रहते हैं। पकने पर उनका रंग भूरा हो जाता है। एक फल में एक से लेकर दस बीज होते हैं। इन बीजों के चारों ओर गूदा होता है। इमली की कई क़िस्में होती हैं। किसी का गूदा खट्टा होता है, किसी का मीठा।

इमली का वृक्ष अपने फल के कारण ही अधिक लोकप्रिय है। फल का उपयोग कई प्रकार से होता है। इसके गूदे से चटनी तथा शोरबा आदि बनता है। इमली को खाद्य पदार्थ के रूप में सबसे ज़्यादा दक्षिण भारत में इस्तेमाल किया जाता है। बिना इमली के वहां भोजन अपूर्ण समझा जाता है।

इमली का बीज भी कई तरह से काम आता है। इमली के बीज यानी चीयों से तुमने अष्ठा-चंगा खेला ही होगा। बीजों को पीसकर उसके चूरे से रोटियां भी बनाई जाती हैं। सूती कपड़े पर चूरा सरेस की तरह लगाया जाता है। और कहीं-कहीं चूरे को गोंद के साथ मिलाकर सीमेंट की तरह इस्तेमाल किया जाता है। बीज और फल दोनों ही दवा के रूप में भी काम में लाए जाते हैं।

फूल तथा पत्ते भी खाने के काम आते हैं। पत्तों से रंग भी बनाया जाता है।

वृक्ष की लकड़ी भी पहिया, मोगरी, मेज, कुर्सी तथा कोल्हू बनाने के काम आती है।

अंग्रेज़ी में इसे **टैमरिंड** कहते हैं।

□□□

बहुमुखी प्रतिभा के धनी

सत्यजित राय

जिस तरह से हर महीने तुम्हें चकमक पढ़ने को मिलती है, उसी तरह बहुत सारे बच्चे, ख़ासकर बंगाल के बच्चे, बांग्ला भाषा की पत्रिका ***'संदेश'*** के इंतज़ार में रहते हैं। इसमें बच्चों को कहानियां, कविताएं, माथापच्ची जैसी तमाम चीज़ें पढ़ने के लिए मिलती हैं।

संदेश पत्रिका बहुत पहले 1913 में शुरू हुई थी। पत्रिका कलकत्ता का एक राय परिवार निकालता था। इसी परिवार में 1921 में एक बालक जन्मा, जिसका नाम रखा गया-सत्यजित। सत्यजित, संदेश से खेलते-पढ़ते बड़ा हुआ। उसका परिवार एक प्रेस भी चलाता था। इसी प्रेस में संदेश छपता था और छपाई के दूसरे काम भी होते थे। घर के इस माहौल में सत्यजित किताबों की छपाई, डिज़ाइन आदि में दिलचस्पी लेने लगा और बड़े होकर इसी तरह का काम करने लगा। वह किताबों की डिज़ाइन के अलावा चित्र बनाने में भी माहिर था। 'संदेश' पत्रिका आर्थिक कारणों से बंद हो गई। परिवार खुले विचारों का था। इस कारण सत्यजित को बांग्ला साहित्य, चित्रकला, संगीत के साथ-साथ पाश्चात्य साहित्य व संगीत को भी पढ़ने-सुनने का मौक़ा मिला और वह उससे प्रभावित भी हुआ।

इसी बीच 1950 में सत्यजित इंग्लैंड की यात्रा पर गया। इस यात्रा के दौरान उसके मन में फ़िल्म या सिनेमा के प्रति काफ़ी दिलचस्पी बढ़ी। चार-पांच महीने के प्रवास के दौरान उसने वहां लगभग सौ फ़िल्में देख डालीं। समुद्री जहाज़ से देश वापस आते हुए उसके मन में स्वयं फ़िल्म बनाने की बात आई और उसने एक फ़िल्म का प्लान भी बनाया। लेकिन फ़िल्म के लिए पैसा कहां से आए! जैसे-तैसे, यहां-वहां हाथ-पांव मारकर सत्यजित ने पैसा जुटाया और 1955 में अपनी पहली फ़िल्म पूरी की। नाम था-***पौथेर पांचाली*** (रास्ते का गीत)। फ़िल्म एक गांव के ग़रीब परिवार के दो बच्चे अपु व दुर्गा के बारे में थी। इस फ़िल्म ने साल की सर्वश्रेष्ठ फ़िल्म होने का राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त किया। फ़िल्म वास्तव में इतनी सुंदर और दिल को छूने वाली थी कि सत्यजित, सत्यजित राय के नाम से सब तरफ पहचाना जाने लगा।

इसके बाद तो सत्यजित राय ने पीछे मुड़कर नहीं देखा। एक के बाद एक उन्होंने चौंकाने वाली कलात्मक फ़िल्में बनाई। इनमें अपु पर ही बनी दो और फ़िल्में, ***'ओपूर शौंशार'***

'पौथेर पांचाली' फिल्म के तीन दृश्य। ऊपर तथा नीचे फिल्म के वास्तविक दृश्य हैं। बीच में जो चित्र है वह फिल्म बनाने के पहले का है और लकड़ी पर उकेरा गया है। कुछ फिल्मकार, फिल्म के दृश्यों को पहले चित्रकार से काग़ज़ पर चित्रित कराते हैं। फिर उसी के आधार पर उसे फिल्माया जाता है। सत्यजित राय चूंकि चित्रकार भी थे, सो अपनी फिल्मों के दृश्यों को खुद ही चित्रित करते थे।

और *'औपोराजितो'* भी थी। धीरे-धीरे उनकी ख्याति एक महान फ़िल्मकार के रूप में फैलने लगी।

लेकिन इस ख्याति का सत्यजित राय पर कोई असर नहीं पड़ा। जब बंबई के फ़िल्मी सितारों या दूसरे फ़िल्मकारों को थोड़ी–सी ख्याति भी मिलती है तो उनके घर बदल जाते हैं, कपड़े बदल जाते हैं, नई मोटर गाड़ियां आ जाती हैं-ख़ूब चमक-दमक रहती है। लेकिन 6 फुट 4 इंच लंबे सत्यजित राय पर इस सफलता का कोई असर नही पड़ा। वे अपनी पत्नी विजया के साथ अपने पुराने घर में ही बने रहे। न उनका रहन-सहन बदला, न दिनचर्या। किताबें पढ़ना, संगीत सुनना और चित्रकारी करना वैसे ही जारी रहा। अपने सीमित साधनों के बीच वे फ़िल्में भी लगातार बनाते रहे। इन फ़िल्मों से उनको पैसा बहुत अधिक नहीं मिला। एक तो बांग्ला भाषा में होने के कारण फ़िल्में केवल बंगाल में ही कुछ जगहों पर रिलीज़ होती थीं। हां, अंतर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय पुरस्कार तथा ख्याति उन्हें भरपूर मिली। सत्यजित राय ने पैंतीस से अधिक फ़िल्में बनाईं और लगभग हर फिल्म को कोई न कोई राष्ट्रीय या अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार मिला।

सत्यजित राय ने 1968 में एक फ़िल्म बनाई *'गूपी गाइन बाघा बाइन'* । यह फ़िल्म वैसे तो सबके लिए थी, पर बच्चों ने इसे बहुत पसंद किया। वास्तव में बच्चों के लिए सत्यजित राय एक अलग रूप में सामने आए। यह रूप था लेखक का। 'संदेश' का बंद होना उन्हें लगातार खटकता रहा था। 1961 में उन्होंने प्रयास करके उसे फिर से निकालना शुरू किया। संपादन का काम ख़ुद संभाला। चालीस साल की उम्र में उन्होंने पहली बार बच्चों के लिए लिखना शुरू किया। अनुवाद के अलावा, कहानियां, फ़ैंटेसी, मज़ेदार विज्ञान कथाएं आदि उन्होंने लगातार लिखीं। 'संदेश' के अलावा अन्य प्रकाशकों ने उनकी किताबें छापीं। संदेश ने ही उन्हें लेखक बनने का हौसला दिया और प्रतिष्ठित भी किया। उन्होंने बाल साहित्य के लिए कई पुरस्कार जीते, जिनमें साहित्य अकादमी पुरस्कार, आनंद पुरस्कार के अलावा, बांग्ला का सर्वोच्च पुरस्कार विद्यासागर भी शामिल है। मज़े कि बात यह है कि पिछले तीस वर्षों में घर की नियमित आमदनी का ज़रिया उनके लिए वही बच्चों का लेखन था न कि उनकी फ़िल्में।

पिछले पांच-छह सालों से वे हृदय रोग से पीड़ित थे। इसके बावजूद वे लगातार लिखते रहे और फ़िल्में बनाते रहे।

पिछली 23 अप्रैल को कलकत्ता के एक नर्सिंग होम में उनका निधन हो गया। इस तरह एक कहानी लेखक, संगीतकार, चित्रकार और एक फ़िल्मकार नहीं रहा। लेकिन यह मिसाल छोड़ गया कि ये सब हुनर किसी एक आदमी में भी भरपूर हो सकते हैं, बिना किसी बाहरी चमक-दमक के।

अगले अंकों में हम तुम्हें सत्यजित राय की कहानियों का अनुवाद उपलब्ध कराने की कोशिश करेंगे।

❑ **विनोद रायना**

सत्यजित राय को

'संदेश' ने बनाया लेखक!

'संदेश' की शुरूआत 1913 में सत्यजित राय के दादा उपेंद्रकिशोर राय चौधुरी ने की थी। सत्यजित के पिता सुकुमार राय और मेरी मां भाई-बहन थे। घर में नीचे प्रेस था, ऊपर स्टूडियो और पिछले हिस्से में सब लोग रहते थे। इस तरह से वे बचपन से देखते रहे मशीन का चलना, किताबों का छपना, चित्रों का बनना, ब्लॉक तैयार होना यानी पूरे माहौल से वे जुड़े थे। मैं भी यह सब देखती क्योंकि अक़्सर मेरा भी मामा के घर आना-जाना लगा ही रहता था।

हमने उपेंद्रकिशोर राय चौधुरी को नहीं देखा क्योंकि वे बहुत पहले ही गुज़र गए थे। मैंने और सत्यजित ने सुकुमार राय को 'संदेश' का संपादन करते देखा है। अपूर्व ढंग से वे संपादन करते थे। उन दिनों 'संदेश' बहुत ही अच्छा निकलता था। बहुत अच्छे कवि भी थे वे। उनकी 'आबोल-ताबोल' कविताएं उन दिनों बच्चे गुनगुनाते थे। बहुत कम लोगों को पता है कि वे बच्चों के लिए इतने प्यारे लेख लिखते थे कि वे सब कुछ छोड़ लेख पढ़ते थे। बहुत कम उम्र में उनकी मृत्यु हो गई। उनको कालाजार हुआ था जिसका उन दिनों कोई इलाज ही नहीं था। तब सत्यजित राय सिर्फ़ दो साल के थे। उसके बाद 'संदेश' तीन साल तक और चली। सत्यजित राय के काका सुविनय राय ने उसे चलाया। उनमें योग्यता तो थी पर व्यावसायिक बुद्धि नहीं थी। वे छोटे भी थे, काफ़ी ऋण हो गया। बाद में उन्होंने घर और प्रेस वग़ैरह बेच कर ऋण चुकाया। उसके बाद जिन्होंने 'संदेश' ख़रीदी थी

***संदेश** का शीर्षक चित्र (ऊपर)। आबोल-ताबोल कविता के चित्र (बीच में)। 'गूपी गाइन बाघा बाइन' कहानी का एक चित्र (नीचे)।*

उन्होंने चलाने की कोशिश की, सुविनय राय ने भी उनकी मदद की पर वे लोग चला नहीं पाए। तब सत्यजित छह साल के थे। उसके बाद मामी अपने बेटे सत्यजित राय को लेकर अपने छोटे भाई के बकुलतला वाले किराए के मकान में चली गईं।

उनकी मां की दिली ख़्वाहिश थी कि उनका बेटा उस 'संदेश' में फिर जान डाले जिसे उसके दादा जी ने शुरू किया और पिता ने आगे बढ़ाया। लेकिन जब उन्होंने सत्यजित में इसके बारे में कोई उत्साह नहीं देखा तो कुछ बोली नहीं। हो सकता है मन ही मन सत्यजित की सोच भी मां जैसी ही रही हो पर उन्होंने किसी से कुछ कहा नहीं। कोई उनका मन जान भी नहीं पाया। उसके बाद उनकी मां की मृत्यु हो गई। कुछ दिन बाद सत्यजित ने अपने दोस्तों से सलाह-मशविरा किया कि 'संदेश' फिर निकालनी चाहिए। इनमें उनके कालेज के बंधु सुभाष मुखोपाध्याय (कवि) भी थे। इस तरह से 1961 में इन लोगों ने फिर संदेश निकाली। उस वक्त रुपए-पैसे लगाने व दूसरे संपादकीय दायित्व निभाने की ज़िम्मेदारी सत्यजित ने ली और सुभाष मुखोपाध्याय संयुक्त संपादक बने। उस वक्त मानिक (सत्यजीत का घर का नाम) की उम्र 40 साल थी।

इस संदर्भ में एक बात का उल्लेख करना

संदेश का एक आवरण। इसे सत्यजित राय ने बनाया था।

बेहद ज़रूरी है कि जिस सत्यजित ने तब तक कुछ भी नहीं लिखा, वे 'संदेश' के दुबारा शुरू होते ही, पहले महीने से ही उसमें लिखने लगे। और उनका लिखा बहुत अच्छा होता था। शुरू-शुरू में उन्होंने एडवर्ड लियर व ऐसे ही कुछ दूसरे मशहूर कवियों की कविताओं का बांग्ला में अनुवाद करना शुरू किया। अनुवाद इतना अच्छा होता था कि लोग उनकी इन कविताओं की तुलना उनके पिता सुकुमार राय की कविताओं से करने लगे। इन कविताओं का सिलसिला मई 1961 से सितम्बर 1961 तक चलता रहा। उसके बाद अक्टूबर 1961 में उन्होंने लिखी *'ब्योम जात्रीर डायरी'* यानी अंतरिक्ष यात्री की डायरी। इस यात्री के लिए उन्होंने एक नया चरित्र गढ़ा प्रोफ़ेसर शोंकू। ये प्रोफ़ेसर शोंकू ऐसे हैं जिन्होंने ख़ुद एक अद्भुत राकेट बनाया है जिसे मेकनिकल रोबोट चलाता है, जिसका अपना नाम है। यह रोबोट बोलना भी जानता है। उनके साथ हैं एक नौकर व बिल्ली। शोंकू अनजाने गृह की यात्रा पर निकलते हैं और पहले उनका यान मंगल में उतरता है। उसके बाद कोई अनजान ग्रह उसे अपनी ओर खींच लेता है और प्रोफ़ेसर शोंकू वहीं ख़त्म हो जाते हैं। पर उनकी डायरी कुछ दिन बाद रहस्यमय ढंग से सुंदरवन में उल्कापात से बने एक गढ्ढे में मिलती है।

यह *'ब्योम जात्रीर डायरी'* ही उनकी पहली मौलिक रचना है। यहीं से शुरू हुआ बाल साहित्यकार सत्यजित राय का सफ़र। वे यहीं नहीं थमे। इसके बाद कविताओं का अनुवाद भी करते रहे और छोटी-छोटी कहानियां भी लिखते रहे। *'बोंकू बाबूर बोंधु', तैरो डौक्टिलेर डीम', 'सेप्टोपसेर खिदे'*। *'सत्यजित राय प्रेज़ेंट्स'* सीरियल में *'बोंकू बाबूर बोंधु'* व दूसरी कहानियां दिखाई गई थीं। उनकी छोटी कहानियां *'शोदानौंदेर खुदे जौगोत','औनाथ बाबूर भौय'*;. *'दुई मैजीशियन'* का सिलसिला चल ही रहा था कि उनके नन्हें-मुन्ने पाठकों ने मांग की कि प्रोफ़ेसर शोंकू कहां गए, उन्हें वापस आना चाहिए। जनवरी 1963 में उन्होंने फिर प्रोफ़ेसर शोंकू के बारे में लिखा कि-हमने गिरिडीह में प्रोफेसर के घर से 22 डायरियां बरामद की हैं। यह

ख़बर 'संदेश' के पाठक बच्चों को खुश करने के लिए काफ़ी थी। तब तक सत्यजित राय फ़िल्मकार के रूप में तो जाने-पहचाने थे पर लेखक के तौर पर उनकी पहचान सिर्फ़ 'संदेश' के पाठकों भर से बन पाई थी। वे उनके प्रशंसक थे। उनकी मांग पर ही *'प्रोफेसर शोंकू'*,उन्होंने लिखा। फिर कुछ दिन बाद *इजिप्सियों आतोंको, 'प्रोफ़ेसर शोंकू ओ भेकॉव'., 'प्रोफ़ेसर शोंकू ओ आश्चोर्जो पुतुल'. 'प्रोफ़ेसर शोंकू ओ गोलोक रोहोश्यो'*। 1965 में मेरे पति अशोकानंद दास ने जो कवि जीवनानंद दास के भाई थे, एक प्रकाशन शुरू किया 'न्यू स्क्रिप्ट' के नाम से। यहां एक बात का ज़िक्र और करती चलूं कवि सुभाष मुखोपाध्याय के साथ मिल कर उन्होंने 'संदेश' दोबारा निकाला तो लेकिन पैसे की कमी से चलाना मुश्किल हो रहा था। तब हम सबने सलाह दी कि इसके लिए एक कोऑपरेटिव बनाई जाए। 1963 में हमने सुकुमार साहित्य समवाय नामक एक कोऑपरेटिव गठित की। इसके शेयर बेच कर हमने कई हज़ार रुपए जुटा लिए। उसके बाद भी पाया यह गया कि पैसा तो लग गया पर पत्रिका पूरी तरह खड़ी नहीं हो पाई। यह देख कर मेरे पति अशोकानंद दास बोले कि ऐसे नहीं चलेगा। यह वेतनभोगी संपादक, वेतनभोगी मैनेजर, मकान का किराया यह सब ख़त्म करना होगा। जितने वेतन पाते हैं उन्हें हटा दो। उसके बाद कुछ दिन तक हमने पार्ट टाइम जाब के तौर पर संदेश में काम किया। मैंने इसके लिए टाइपिंग की. पैकेट तक बांधे। हमने सोचा अगर इस तरह नहीं जुटते तो पत्रिका खड़ी ही नहीं हो पाएगी। सर्विस से रिटायर होने के बाद अशोकानंद बाबू ने अपना प्रकाशन शुरू किया। उद्देश्य था कम मूल्य पर बच्चों के लिए अच्छी किताबें निकालना। उन्होंने 'प्रोफ़ेसर शोंकू' के नाम से एक किताब प्रकाशित की। इसमें सत्यजित की शोंकू सीरिज़ की कहानियां हैं और यही उनकी पहली प्रकाशित किताब है। इसके बाज़ार में आने के बाद पहली बार 'संदेश के पाठकों के अलावा दूसरे लोग भी सत्यजित राय नामक लेखक से परिचित हुए। इसके निकलते ही इसे केंद्र सरकार की ओर से अकादमी पुरस्कार मिल गया और सरकार ने इसकी

प्रोफ़ेसर शोंकू और उनका रोबोट। चित्रकार : सत्यजित राय

200 प्रतियां ख़रीद लीं। वे लगातार छोटी कहानियां लिखते रहे, कविताओं का अनुवाद करते रहे।

दिसंबर, 1965 में उन्होंने एक नए पात्र फेलूदा को जन्म दिया। यह पात्र भी उन्होंने 'संदेश' के पाठकों के लिए ही रचा था। उन्होंने एक लघु उपन्यास लिखा, *'फेलूदार गोयेंदागीरी'*। इसे भी लोगों ने बहुत पसंद किया, इसकी मांग बढ़ गई।

उनकी ज़्यादा तबीयत तो जनवरी, 1992 से ख़राब हुई। दिसंबर, 1991 में उन्होंने 'संदेश' के लिए अपनी आख़िरी रचना लिखी। वह अंक सुविनय राय शतवार्षिकी अंक था जिसमें उन्होंने अपने काका के बारे में लिखा था। यही उनके जीवन की आख़िरी रचना थी। इसके पहले अगस्त, 91 में उन्होंने एक कहानी भी 'संदेश' के लिए लिखी। इसके अलावा वे कहीं नहीं लिख पाए।

जनवरी, 92 में मेरी भेंट उनसे हुई तो बोले-'क्या करूं दिमाग़ में कहानी का कोई प्लाट नहीं आ रहा।' मैंने सुझाया, 'प्लाट नहीं आ रहा तो किसी अच्छी विदेशी कहानी का अनुवाद ही क्यों नहीं कर देते। यह उनके बीमार पड़ने और नर्सिंग होम जाने से पहले की बात है। तब कौन जानता था कि दिसंबर की उनकी रचना ही जीवन की आख़िरी रचना बन जाएगी।

❑ **नलिनी दास**

लेखिका न केवल सत्यजित राय की 'फुफेरी बहन' हैं, बल्कि 'संदेश' की संपादक भी।

खेल कागज़ का

फूल बनाओ

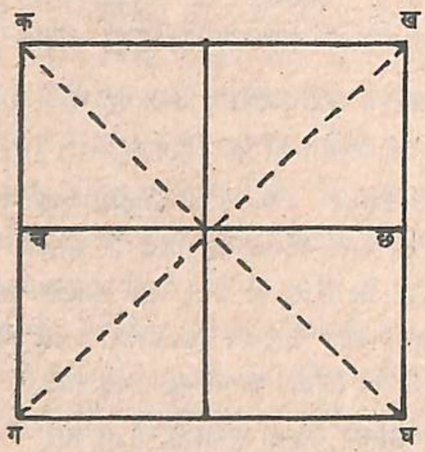

1. एक वर्गाकार कागज़ लो। कागज़ को रुमाल की तरह चार तहों में मोड़कर मोड़ पक्के कर लो। कागज़ पर कर्ण रेखाएं प्राप्त करो तथा उसे नामांकित कर लो।

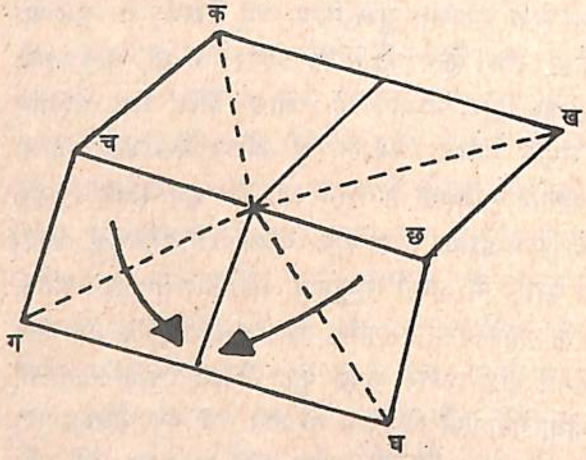

2. अब **च** तथा **छ** सिरों को **ग** और **घ** से कागज़ के केंद्र की तरफ जाने वाली कर्ण रेखाओं पर मोड़ते हुए तीर द्वारा बताए बिंदु पर लाने की कोशिश करो।

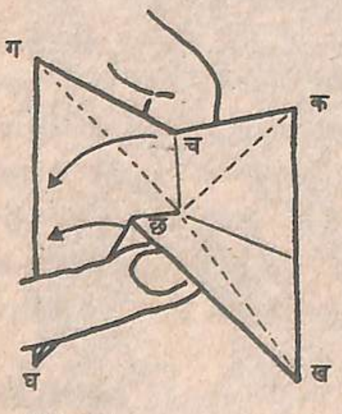

3. इस तरह।

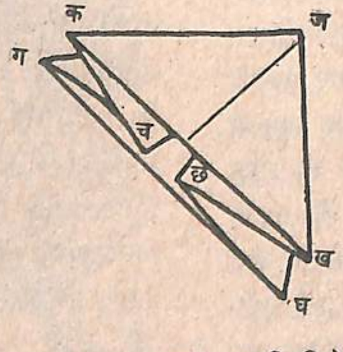

4. तुम्हें चार तहवाली आकृति मिलेगी। इस आकृति को **पानी आधार** कहते हैं।

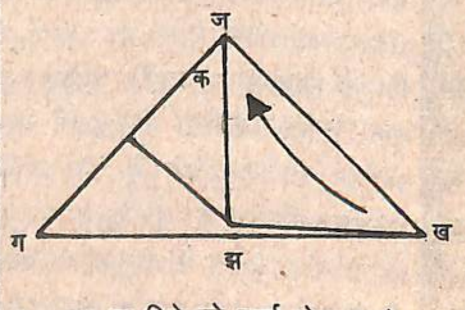

5. अब **क** सिरे को खाई मोड़ बनाते हुए **ज** सिरे पर लाओ। इसी तरह **ख** सिरे को भी खाई मोड़ बनाते हुये **ज** पर लाओ।

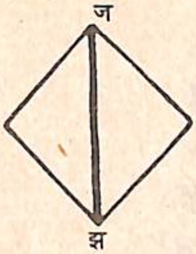

6. अब आकृति को पलट लो और **ग** तथा **घ** सिरों को भी खाई मोड़ बनाते हुए **ज** पर लाओ। इस तरह तुम्हें जो आकृति मिलेगी, उसमें **क** और **ख** सिरों वाली सतहें आमने-सामने होंगी। इसी तरह **ग** और **घ** सिरों वाली सतहें भी आमने-सामने होंगी।

7. अब करना यह है कि **क** और **ख** सिरों वाली सतहें एक-दूसरे पर आ जाएं। इसी तरह **ग** और **घ** सतहें भी।

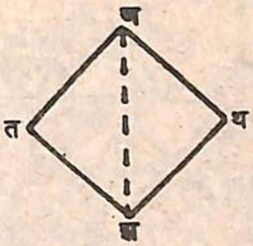

8. इस तरह बनी आकृति के सिरों को नाम दे दो।

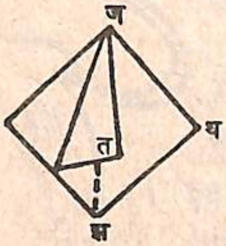

9. अब **त ज** भुजा को खाई मोड़ बनाते हुए **ज झ** रेखा से थोड़ा आगे लाओ।

10. इसी तरह **ज थ** भुजा को भी खाई मोड़ बनाते हुए **ज झ** रेखा से थोड़ा आगे लाओ।

11. इस तरह बने सिरों को एक-दूसरे में फंसा दो। यानी **त** को **थ** में। आकृति को पलटो और इस ओर के सिरों को भी इसी तरह मोड़कर एक दूसरे में फंसा दो।

12. अब **झ** सिरे की ओर से एक छोटा छेद दिखाई देगा, उसमें ज़ोर से फूंक मारो। फूंक से आकृति फूल जाएगी। यह फूली हुई आकृति एक कली की तरह दिखाई देगी।

13. इसमें दिखाई देने वाली पंखुड़ियों को अलग-अलग दिशाओं में खोलो। अब चाहो तो नीचे कागज़ की ही एक डंडी बनाकर लगा दो।

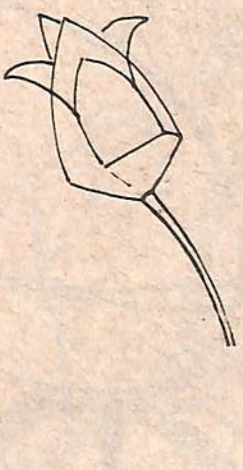

ट्रैफ़िक

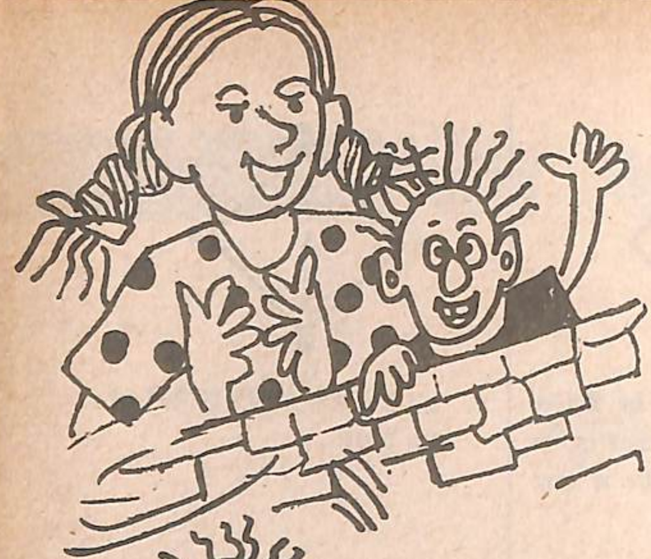

एक दोपहरी अपनी छत से
देखा हमने ट्रैफ़िक जाम
देख नज़ारा उस हलचल का
मुंह से निकला, ''हे भगवान!''
दाएं मोटर, बाएं इक्का
आगे साइकिल, पीछे रिक्शा
टों टों टों.... घर्रर्र घर्रर्र..
पीं पीं पीं... ट्रन्न ट्रन्न ट्रान्न...
ऐसा होता ट्रैफ़िक जाम

स्कूटर वाले श्याम लाल जी
मोटर वाले मिस्टर मान
साइकिल वाले छीतर भैया
सबकी थी बस यही ज़ुबान
''चल बे चल!'', ''आगे बढ़..!''
इधर से हंटर, उधर से हार्न
तभी समस्या सुलझाने को
धुआं उड़ाता आया ट्राम
ऐसा होता ट्रैफ़िक जाम

अबुल मियां
फज़लू को म
फज़लू घोड़ा
काट लिया
बाबू जी ने
चालक को
हड़बड़ी में मु
छूट गया फ
ऐसा होता ट्रै

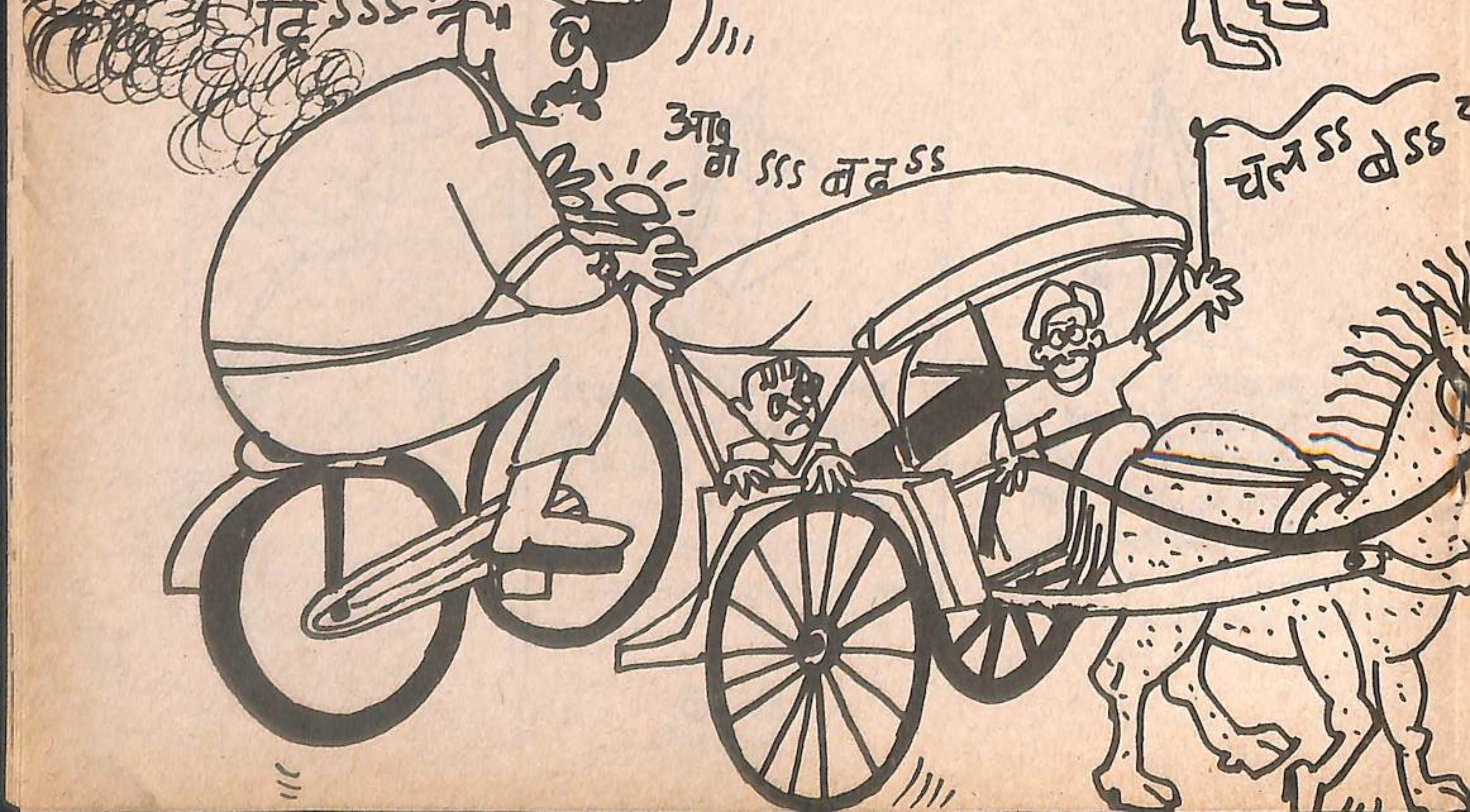

क जाम

ने खाया ताव
ारा चाबुक तान
बिदक गया
ाबू का कान
गले स्कूटर-
ड़की मारी
ह से उसके
वारा पान
फ़िक जाम

बीच इस कोहराम के
फंसा हुआ था बैल एक
नाहक ट्रैफ़िक जाम का
बना हुआ था कारण नेक
इर्द-गिर्द उस बैल के
लगा रहे थे वाहन ब्रेक
लेकिन रस्ता देने को राजी
था ना कोई एक

आसमान को छूते पारे
देर सभी को होती प्यारे
तुझे पहुंचना दफ़्तर है
तो मेरी छूटी जाती ट्राम
ऐसा होता ट्रैफ़िक जाम
भवें सिकोड़ो, गाली दे लो
जी भर के तुम शोर मचा लो
लेकिन भैया इस सबका
तो होगा ना कोई अंजाम
रुका रहेगा सबका काम
बना रहेगा ट्रैफ़िक जाम!!

❑ स्मिता अग्रवाल
चित्रः शोभा घारे

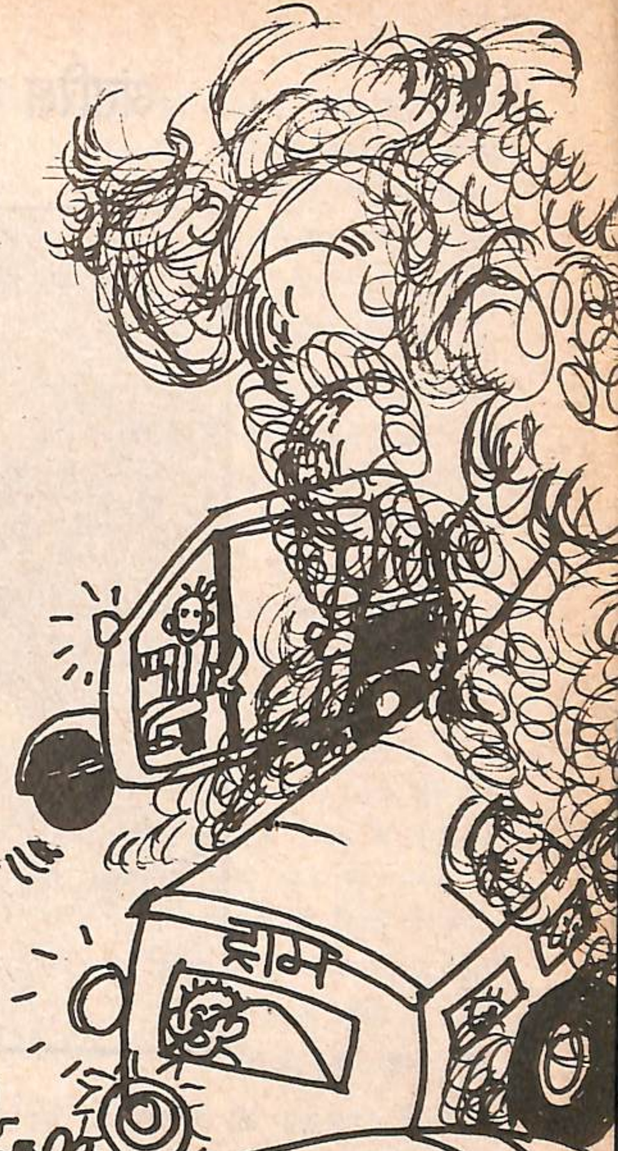

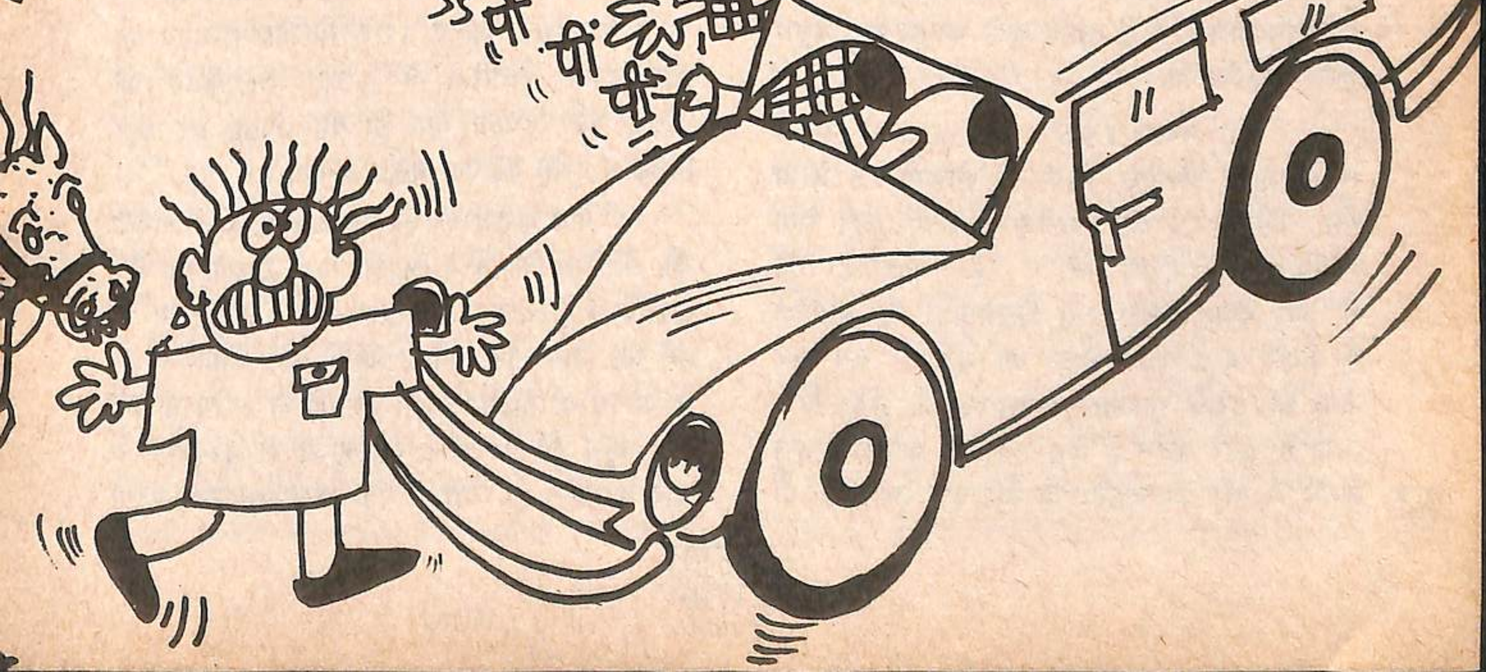

अंतरिक्ष में भारत के बढ़ते कदम

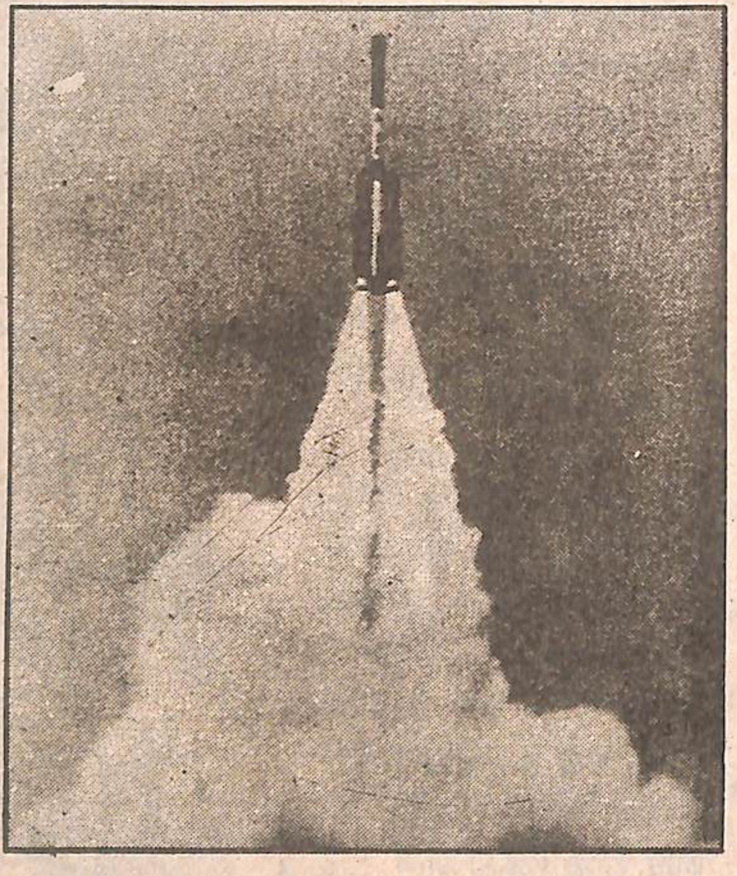

20 मई, 1992 की तारीख़ को यह कहा जा सकता है कि भारत ने अंतरिक्ष में एक बड़ा क़दम रखा। यह वह तारीख़ है जब **ए.एस.एल.वी.** यानी आगमेनटिड सेटेलाइट लांच व्हीकल को कामयाबी के साथ आंध्रप्रदेश के श्रीहरिकोटा से छोड़ा गया। केवल पच्चीस वर्षों में इतनी बड़ी कामयाबी सचमुच क़ाबिले तारीफ़ है।

20 नवंबर,1967 को भारत ने अपना सबसे पहला अंतरिक्ष 'खिलौना' **रोहिणी-75** छोड़ा था। *रोहिणी-75* को खिलौना इसलिए कहा गया क्योंकि इसकी परिधि मात्र $7\frac{1}{2}$ सेंटीमीटर की थी और वज़न केवल 10 किलोग्राम। वह अंतरिक्ष में केवल 4.2 किलोमीटर की दूरी ही तय कर पाया था। इसके मुकाबले *ए.एस.एल.वी.* 24 मीटर ऊंचा है, और वज़न है 40 टन। यह कामयाबी इस मायने में भी उल्लेखनीय है कि इस तरह के दो राकेट पहले 1987 व 1988 में भी छोड़े गए थे, लेकिन नाकामयाब रहे। पहला ठीक से चालू नहीं हो पाया था और दूसरा उड़ते ही बेकाबू होकर नष्ट हो गया था।

सफल *ए.एस.एल.वी.* की एक ख़ासियत यह भी है कि इसके ज़रिए 106 किलोग्राम वज़न का एक उपग्रह, अंतरिक्ष में 450 किलोमीटर की ऊंचाई पर पहुंचाया गया है। यह उपग्रह हर 92 मिनट में पृथ्वी का एक चक्कर लगाता है।

पांच करोड़ की लागत के इस सफल राकेट की अंतरिक्ष विज्ञान में आख़िर क्या उपयोगिता है? वास्तव में दूरदर्शन या स्टार टी.वी. देखते हुए ही हमें यह जान लेना चाहिए कि ये सब कार्यक्रम घर के आंगन या ड्राइंग रूम में उपग्रहों के ज़रिए ही हम तक पहुंच रहे हैं। इंसेट उपग्रह से ही दूरदर्शन के सारे कार्यक्रम पूरे देश में एक साथ प्रसारित करना

संभव हो पाया है। टी.वी. के अतिरिक्त टेलीफोन जैसी अन्य सुविधाएं भी उपग्रह के कारण ही बहुत आसान हो गई हैं। इस उपलब्धि तक पहुंचने के लिए दो बातें ज़रूरी हैं, पहली यह कि ऐसा उपग्रह बनाया जाए जिससे दूरसंचार का काम लिया जा सके। दूसरी यह कि इस उपग्रह को अंतरिक्ष में एक निश्चित ऊंचाई पर पहुंचाना और उस पर नियंत्रण रखना। अंतरिक्ष में पहुंचाने का काम राकेट लांचर द्वारा होता है।

अब जहां तक उपग्रहों का सवाल है, दूरसंचार व रिमोट सेंसिंग (इस तरीक़े से पृथ्वी की भोगौलिक जानकारी ली जाती है) दोनों कामों के लिए देश में उपग्रह बनाए जा रहे हैं। इंसेट श्रृंखला के उपग्रह जो दूरसंचार व मौसम की जानकारी देते हैं, और आई. आर. एस. उपग्रह जो रिमोट सेंसिंग के लिए काम आते हैं, देश में ही बनने लगे हैं। लेकिन इनको अंतरिक्ष में पहुंचाने के लिए राकेट लांचर देश में उपलब्ध न होने के कारण अन्य देशों की मदद से उन्हें अंतरिक्ष में भेजा गया। पर इनमें भी हमेशा कामयाबी नहीं मिली। 1982 में **इंसेट-1ए** अमेरिका से छोड़ा गया था, लेकिन अंतरिक्ष में पहुंचने के बाद वह बेकार हो गया। **इंसेट-1 सी** यूरोप के एक राकेट से छोड़ा गया था, लेकिन वह भी बेकार हो गया। **इंसेट-1डी** अमेरिका के डेल्टा राकेट से एक बार गिर गया था, लेकिन साल भर बाद 1990 में उसे सफलता से छोड़ा गया।

कहने का मतलब यह है कि अगर अंतरिक्ष में हमें उपयोगी उपग्रह लगातार छोड़ने हैं तो उनको छोड़ने के लिए क्षमतावान राकेटों का विकास भी अपने देश में ही करना होगा। *ए.एस.एल.वी.* राकेट ज़्यादा से ज़्यादा 150 किलोग्राम का उपग्रह ही अंतरिक्ष में पहुंचा सकता है, जबकि दूरसंचार के काम आने वाले उपग्रह का वज़न 1000 किलोग्राम से भी अधिक हो सकता है। यही नहीं, दूरसंचार के उपग्रहों को अंतरिक्ष की एक ख़ास कक्षा में छोड़ना होता है। मान लो हम भारत के विभिन्न राज्यों के बीच संचार संबंध स्थापित करने के लिए उपग्रह छोड़ना चाहते हैं। इसके लिए उपग्रह को इतनी ऊंचाई पर स्थापित करना होगा जहां उसे अपनी कक्षा का एक चक्कर पूरा करने में उतना ही समय लगे, जितना पृथ्वी को अपनी धुरी पर एक चक्कर पूरा करने में लगता है। ऐसा होने पर उपग्रह हमेशा भारत के ऊपर ही रहेगा। ऐसे उपग्रह को पृथ्वी से 36,000 किलोमीटर ऊपर स्थापित करना होगा।

तो हमें एक ऐसा राकेट चाहिए जो 1000 किलोग्राम से अधिक वज़न का उपग्रह 36,000 किलोमीटर दूर अंतरिक्ष में एक नियंत्रित जगह तक ले जा सके। ऐसे राकेट को जियोसिंक्रॉनस सेटिलाईट लांच व्हीकल यानी *जी.एस.एल.वी.* कहा जाता है। देश में *जी.एस.एल.वी.* बनाने की कोशिश चल रही है। *ए.एस.एल.वी.* इसी मंज़िल पर पहुंचने की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। देश में एक और तरह की लांच व्हीकल बनाने के प्रयास भी ज़ारी हैं, जिसे पोलर सेटिलाईट लांच व्हीकल कहा जाता है। इस राकेट से उपग्रह को एक ऐसी कक्षा में पहुंचाया जाता है, जो पृथ्वी के दोनों ध्रुवों के ऊपर से गुजरती है, यानि पृथ्वी के घूमने की दिशा से 90° के कोण की दिशा। रिमोट सेंसिंग के उपग्रह इसी कक्षा में स्थापित किए जाते हैं। इस तरह के लांच व्हीकल बनाने की दिशा में भी ***ए.एस. एल. वी.*** एक बड़ा क़दम है।

इस तरह के राकेट बनाने में कुछ ख़ास मुश्किलें भी हैं, जिनसे पार पाना सचमुच में एक उपलब्धि मानी जानी चाहिए। पहली मुश्किल तो राकेट को इतना शक्तिशाली तथा क्षमतावान बनाना है कि वह अधिक से अधिक भार उठाकर अंतरिक्ष में ले जा सके। दूसरी मुश्किल पेश आती है राकेट के ईंधन में। राकेट में ईंधन जलाने के लिए ऑक्सीजन की ज़रूरत पड़ती है। पृथ्वी पर हमारा ध्यान इस बात की ओर जाता ही नहीं है क्योंकि चारों ओर हवा में ऑक्सीजन मौजूद रहती हैं। लेकिन जब राकेट पृथ्वी के वातावरण यानी लगभग 200 किलोमीटर की ऊंचाई से आगे बढ़ता है तो न तो हवा रहती है, और न ऑक्सीजन। ज़ाहिर है कि आगे ईंधन जलाने के लिए राकेट में ऑक्सीजन भी होनी चाहिए। राकेट का ईंधन भी कोई साधारण पेट्रोल या डीजल नहीं होता। यह ईंधन ठोस या द्रव

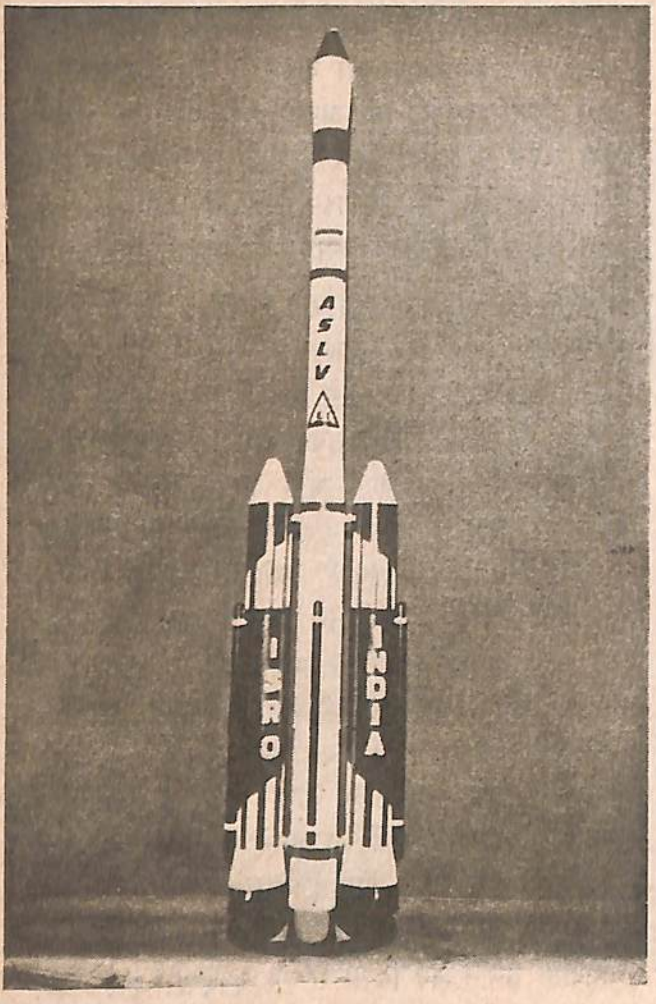

दोनों ही तरह का हो सकता है। राकेट के लिए उपयुक्त ईंधन बनाना भी टेड़ी खीर है। अधिक क्षमतावान राकेट बनाने से पहले ज़रूरी है उसके लिए उचित ईंधन बनाना। कुछ इसी तरह की तकनीक पाने के लिए भारत ने रूस से समझौता किया था, जिस पर अमेरिका ने रोक लगाने की धमकी दी है। अब यह आने वाला समय बताएगा कि यदि यह तकनीक नहीं मिलती है तब भी क्या भारत *जी.एस.एल.वी.* और *पी.एस.एल.वी.* बनाने में कामयाब होता है या नहीं।

ईंधन के संदर्भ में *ए.एस.एल.वी.* में यह ख़ासियत है कि यह पांच खंडों में बंटा रहता है। हर खंड में ईंधन रहता है। जब एक खंड का ईंधन समाप्त होता है तो वह राकेट से अलग हो जाता है। इसी तरह बाकी खंड भी अलग होते जाते हैं। पांचवां खंड उपग्रह को कक्षा में नियंत्रित रूप से स्थापित करता है। *ए.एस.एल.वी.* के दूसरे खंड में द्रव ईंधन होता है और बाकी में ठोस। इस तरह का राकेट जिसमें ठोस व द्रव दोनों ईंधन हों बनाना, तकनीकी रूप से काफ़ी जटिल है। इसीलिए *ए.एस.एल.वी.* की सफलता इतनी महत्वपूर्ण बात है। दूसरी विशेषता यह है कि इस राकेट व उपग्रह को नियंत्रित करने के लिए कुछ नए तरीक़ों का इस्तेमाल किया गया है। एक तरह से यह इन तरीक़ों का परीक्षण है। ये तरीक़े *जी.एस.एल.वी.* व *पी.एस.एल.वी.* को छोड़ते समय काम आएंगे।

अब यह उम्मीद भी की जा सकती है कि शताब्दी के अंत से पहले ही हमारा देश दूरसंचार, रिमोट सेंसिंग व मौसम संबंधी उपग्रह बनाने व उन्हें अंतरिक्ष में छोड़ने में आत्मनिर्भर हो जाएगा।

❑ **विनोद रायना**

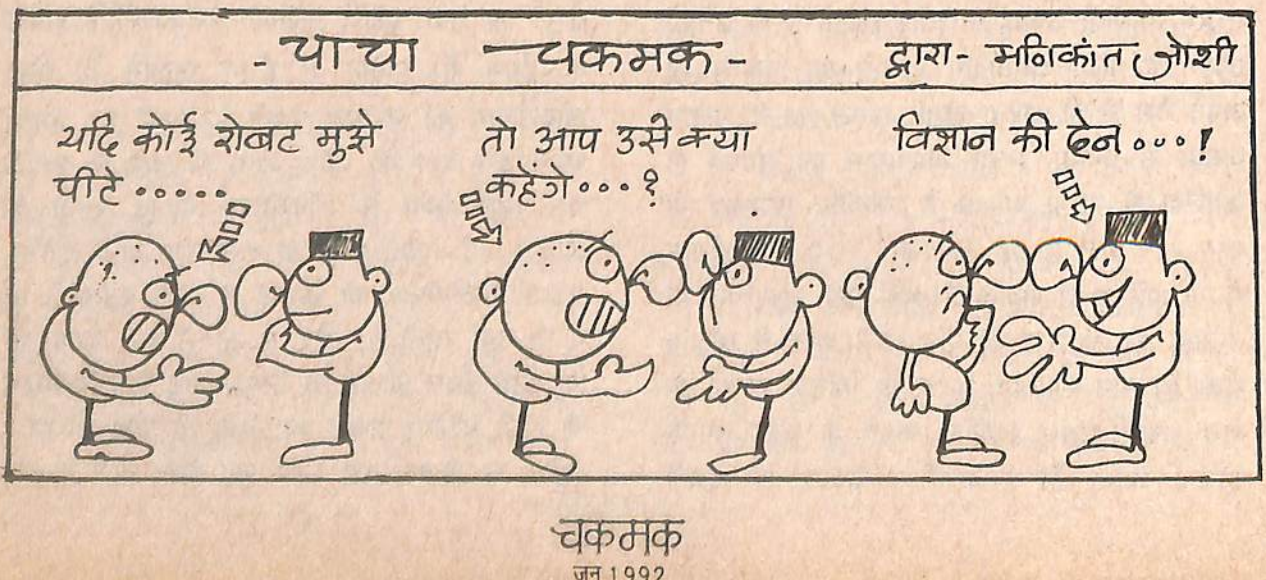

खेल पहेली

टेनग्राम के इन सात टुकड़ों को जोड़कर यहां दी गई विभिन्न आकृतियां बनी हैं। तुम भी बना देखो। (हल अगले अंक में)

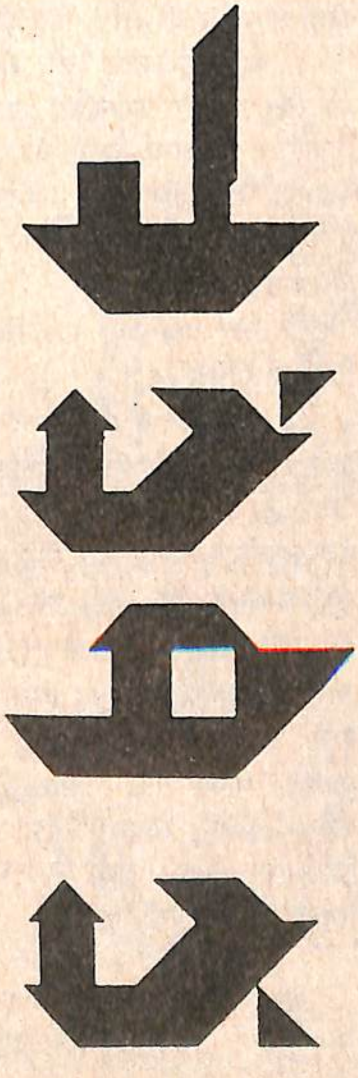

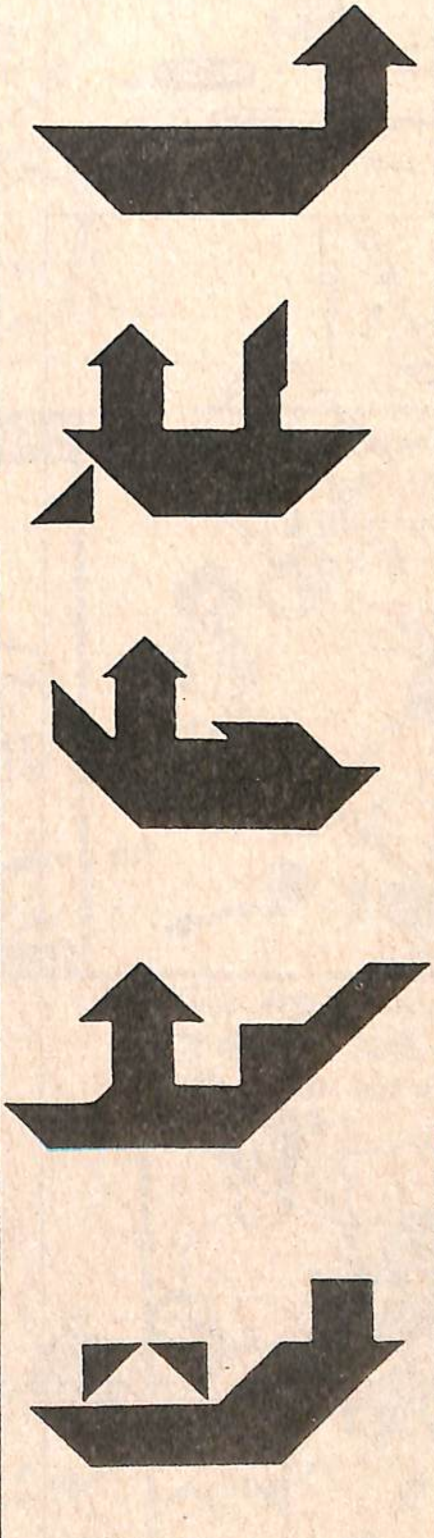

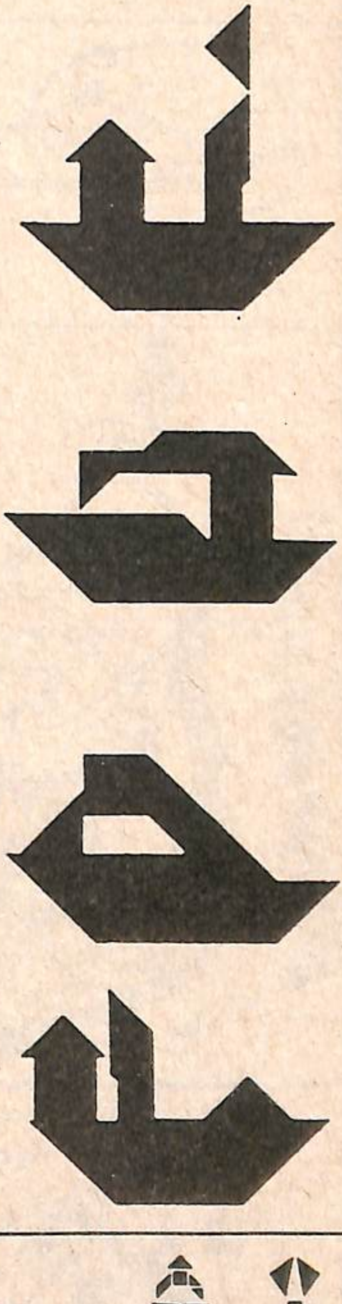

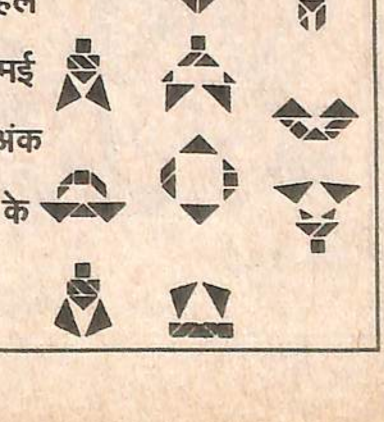

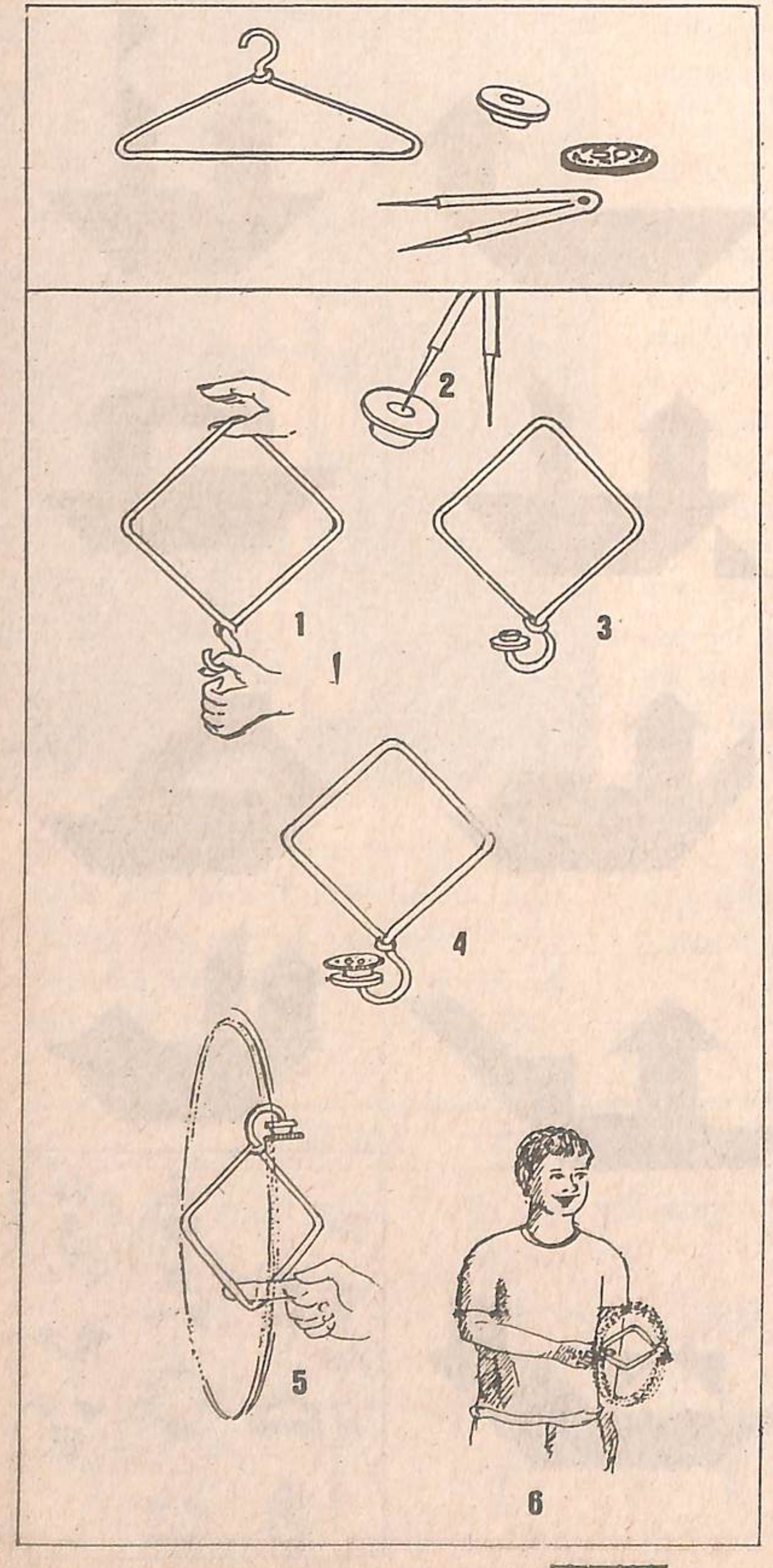

न गिरने वाला सिक्का

अगर तुम अपने दोस्तों को हैरत में डालना चाहते हो तो हम जो बता रहे हैं वह करो।

पहले कपड़े टांगने वाला एल्युमिनियम का बना एक हैंगर लो। अब एक अंगूठे से हैंगर के हुक और दूसरे अंगूठे से हैंगर की लंबी भुजा को विपरीत दिशाओं में खींचकर उसे **चित्र-1** में दिखाए आकार में बदलो। हुक को थोड़ा-सा अंदर की तरफ मोड़ दो।

अब इंजेक्शन की शीशी का रबर का एक ढक्कन लो, उसमें डिवाइडर या अन्य किसी चीज़ से एक छेद करो **(चित्र-2)।** ढक्कन को हैंगर के हुक की नोक में धंसा दो **(चित्र-3)।**

अब ढक्कन पर एक सिक्का टिका दो **(चित्र -4)।**

अब तुम अपने दोस्तों को हैरत में डालने के लिए बिलकुल तैयार हो। हैंगर को पहले तो अपनी एक उंगली पर आगे-पीछे धीरे-धीरे झुलाओ। जब गति थोड़ी बढ़ जाए तो पूरा चक्कर लगाओ **(चित्र 5-6)।** एक बार गति बढ़ जाने पर हैंगर को चाहे जितनी तेज़ी से घुमाओ, सिक्का नहीं गिरेगा। ऐसा लगेगा जैसे सिक्का गोंद से चिपकाकर रखा गया है। बता सकते हो, ऐसा क्यों होता है?

❑ **अरविंद गुप्ता**

चित्र : अविनाश देशपांडे

बिंदु • साहू

वाह, आम!! किंतु मैं पेड़ पर नहीं चढ़ सकती
अब मैं आम कैसे खा सकती हूं?
मुझे आमों की प्रतीक्षा करनी चाहिए। न्यूटन के अनुसार फल नीचे गिरते हैं ऊपर नहीं जाते।
बिंदु, फल टूटकर नीचे क्यों टपकते हैं? वे ऊपर क्यों नहीं चले जाते?
फल नीचे इसलिए गिरता है कि कोई उसके टपकने की प्रतीक्षा कर रहा होता है।

माथापच्ची

(1)

1	9	2
3	8	4
5	7	6

इस चित्र में 1 से 9 तक के अंक तीन पंक्तियों में जमे हैं। इस जमावट की विशेषता यह है कि दूसरी पंक्ति का योग, पहली पंक्ति के योग से दुगना है, जबकि तीसरी पंक्ति का तिगुना।

अंकों को जमाने के तीन और भिन्न क्रम हो सकते हैं, जिनमें अंकों का क्रम तो बदल जाता है लेकिन विशेषता ज्यों की त्यों रहती है। ये तीन भिन्न क्रम कौन से हैं ढूंढो?

(2)

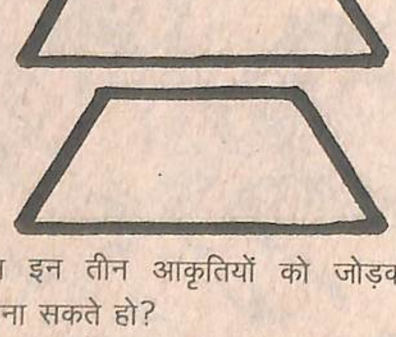

क्या तुम इन तीन आकृतियों को जोड़कर एक त्रिभुज बना सकते हो?

(3)

क्या तुम 1 से 9 तक के अंकों को कुछ इस तरह किसी समीकरण में रख सकते हो कि उसका उत्तर $\frac{1}{2}$ हो।

(4)

एक गणित प्रेमी टेलीफोन नंबरों को अपने तरीक़े से याद रखते थे। जैसे 3025 को वे 30+25=55 और फिर उसका वर्ग यानी 55^2=3025। क्या और भी ऐसी संख्याएं हो सकती हैं?

(5)

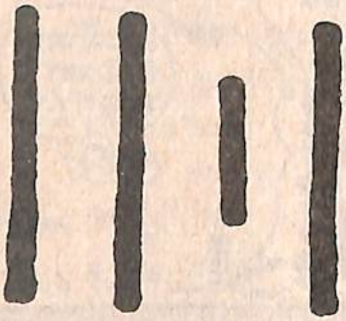

हमारा कहना है कि इन चार लाइनों में संख्या 10 दर्शाई गई है। अब यह ढूंढना तुम्हारा काम है कि कैसे?

(6)

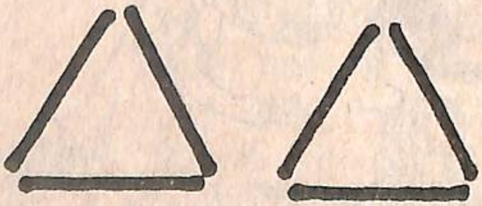

तीन-तीन तीलियों से बने ये दो त्रिभुज हैं। क्या तुम इन्हें कुछ इस तरह जमा सकते हो कि त्रिभुजों की कुल संख्या आठ हो जाए?

सोचकर जबाव दो!

1. **एक** सींग वाली गाय पांच तरबूज खाती है, तो दो सींग वाली गाय कितने तरबूज खाएगी?
2. **गड़रिए** के पास 16 बकरियां थीं, 7 के सिवाए सब मर गईं, तो अब उसके पास कितनी बचीं?
3. **एक** वर्ग फुट और एक फुट वर्ग में क्या अंतर है?
4. **टेलीफोन** पर 987 और 012 में लंबा डायल कौन-सा है?
5. **लकड़ी** के एक बड़े लट्ठे से 12 फुट लंबा एक पटिया निकालने में आरामशीन को एक मिनट लगता है। ऐसे 12 पटिए निकालने में कितना समय लगेगा?

(7)

दो दोस्तों में झगड़ा हो रहा था। हम वहां से गुज़र रहे थे। हमने सोचा पूछें, क्या बात है? पहले तो वे हमारी बात सुनने को ही तैयार नहीं हुए। फिर उन्होंने एक काग़ज़ दिखाया जिस पर लिखा था, सात और तीन का तिगुना कितना होता है?

हमने कहा तो इसमें झगड़ा करने की क्या बात है? वे बोले यही तो मुश्किल है। हममें से एक कहता है कि उत्तर 16 होगा और दूसरा कहता है कि 30, सही क्या है, आप फैसला कीजिए!

हमारा गणित तो वैसे ही कमज़ोर है सो हम तो वहां से खिसक लिए। तुम बताओ, सही उत्तर क्या होगा?

वर्ग पहेली-14

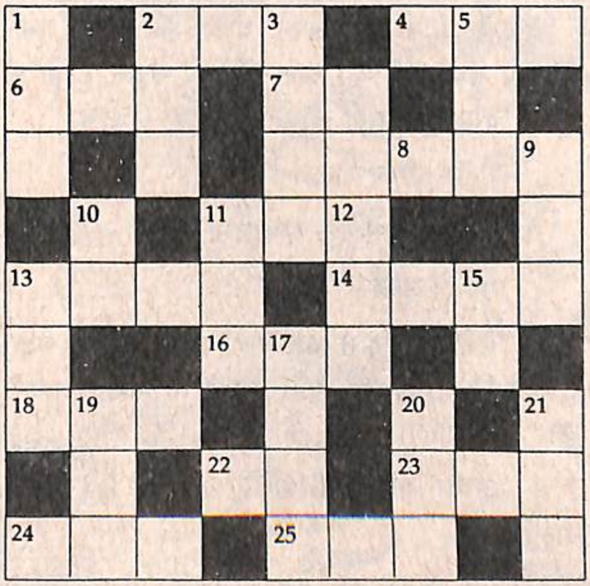

संकेत : बाएं से दाएं

2. दौड़ने वाला (3)
4. छत्तीसगढ़ मध्यप्रदेश का क्या है?(3)
6. रखे हुए मटके में हरी सब्ज़ी (3)
7. झिम के आगे क्या जोड़ें कि हल्की फुहार पड़ने लगे (2)
8. सूर्य (3)
11. कवि मान जाए तो उड़ भी सकता है (3)
13. अधीर होना (4)
14. एक ऐसा प्रदेश जिसकी राजधानी, किसी और प्रदेश की राजधानी भी है (4)
16. नगर (3)
18. ज़ुल्म से लड़ने वाले सिर पर बांध कर निकलते हैं (3)
22. ख्याति (2)
23. नट (3)
24. खंजन पक्षी का एक और नाम (3)
25. कृष्ण के द्वारा इसकी चोरी के बहुत क़िस्से हैं (3)

संकेत : ऊपर से नीचे

1. अनमना होने में भी शांति है (3)
2. विश्वास (3)
3. करामात (4)
5. लोमड़ी का वह गुण जो मनुष्यों ने भी अपना लिया है (3)
9. दया (3)
10. ऊबड़-खाबड़ रास्ते में अरूचि तो होगी ही (2)
11. सब कुछ बरबाद हो जाए तो क्या कहेंगे (3)
12. रहन-सहन में पानी का रास्ता (3)
13. अंश (3)
15. तिब्बत में पाया जाने वाला जंगली भैंसा (2)
17. हरि की तिमारदारी में हरा ही हरा (4)
19. भागा हुआ (3)
20. ....क्या देखे दर्पण में! (3)
21. पत्थर के छोटे-छोटे टुकड़े (3)

खोज, आदमी की

बहुत दिनों की बात है। एक घना जंगल था। इस जंगल में तरह-तरह के जानवर रहते थे। जंगल में एक शेर भी रहता था। वह जंगल का राजा कहलाता था। शेर के साथ शेरनी भी रहती थी। उनका एक छोटा बच्चा था। जंगल के जानवर उसे प्यार से "शेरु" कहकर पुकारते थे। अनेक जानवर ऐसे थे जिनको शेरु जानता भी न था। शेरु की मां उसे गुफा से दूर जाने ही न देती थी। शेरु की बंदर के बच्चे से दोस्ती थी। बंदर के बच्चे का नाम टीका था। वे दोनों मिलकर शैतानी करते। कभी-कभी उन्हें खेलने में देर हो जाती। शेरु घर देर से लौटता। उसकी मां चिंता में पूछती :

"बेटा इतनी देर कहां लगा दी?"

"मां, टीका के साथ उस तालाब पर खेल रहा था। मगर चाचा ने कहानी भी सुनाई।"

शेरनी ने आगे उसकी बात नहीं सुनी। वह बोली, "बेटा तुम घर पर जल्दी आ जाया करो। इधर-उधर अकेले दूर कभी मत जाना।"

"मां मैं तो शेर का बच्चा हूं। जंगल के सभी लोग तो मुझसे डरते हैं।" शेरु बोला।

"यह तो ठीक है? पर बेटा इस दुनिया में एक जानवर है वह किसी से नहीं डरता?"

"उसका नाम क्या है?"

"उसका नाम है आदमी। उसको मनुष्य भी कहते हैं। यह जानवर इतना ख़तरनाक है कि उसने बड़े-बड़ों को अपना ग़ुलाम बना रखा है।"

"अच्छा! क्या वह तुमसे और पिताजी से भी बलवान है।" शेरु बोला।

"बलवान तो नहीं। उसके पास अकल है। अपनी अकल के ज़ोर पर उसने सबको अपने वश में कर रखा है।"

शेरनी ने आगे कहा, "बेटा वह कभी भी हमारे पास पहुंच जाएगा। इसलिए तू दूर कभी न जाना। केवल उसी से डरना।"

"अच्छा मां! पर वह दिखता कैसा है?"

"रात को उसका नाम नहीं लेते। वह हम सबका बड़ा दुश्मन है।"

आदमी का नाम आते ही शेरु की मां की आवाज़ में भय समा जाता है। वह शेरु से बार-बार कहती है, "आदमी से हमेशा बचकर रहना। वह हमारा दुश्मन है।"

शेरु सोचता आख़िर यह आदमी कौन है? कैसा है? कहां रहता है? इस प्रकार के अनेक सवाल उठते। केवल एक बार वह मनुष्य को देखना चाहता था।

एक दिन वह अपने दोस्त के साथ धमा-चौकड़ी मचा रहा था। खेल-खेल में उसने टीका से पूछा, "क्या तू आदमी को जानता है?"

"नहीं।" टीका बोला।

"तो चल उसे एक बार देख आएं।"

"पर किसलिए?"

"मेरी मां मुझसे बार-बार कहती है कि बेटा, तुझको किसी का डर नहीं। डर है तो केवल आदमी का।" शेरु बोला।

"अच्छा! यह किस चिड़िया का नाम है?" टीका बोला।

"भैया मैं भी नहीं जानता। उसका नाम लेते ही मां डरी-डरी लगती है। मैंने उसे देखा नहीं इसलिए देखना चाहता हूं आखिर वह है कैसा?"

टीका उचककर बोला, "यार फिर तो उसको ज़रूर देखना चाहिए। जिस जानवर से तेरी मां को डर लगता है उसकी ख़बर हमको ज़रूर लेना चाहिए।"

"कभी-कभी तो लगता है, उसको पकड़कर मेरी मां के सामने खड़ा कर दूं और कहूं ले मां,

खा, इसे।" शेरु अकड़कर बोला।

"देख शेरु तूने और मैंने अपनी-अपनी मां का दूध पिया है। इसलिए ऐसे जानवर को हमें मज़ा चखाना ही चाहिए।"

"बिल्कुल ठीक कहा।" शेरु बोला। "लेकिन इसके लिए हमको चालाकी से काम करना होगा। हम दोनों अकेले जाकर पहले उसको देख आएं। ज़रूरत पड़ने पर बच्चों की सेना लेकर जाएंगे। उसे पकड़कर लाएंगे।"

"वाह क्या बात कही है, हम कल ही सुबह उसको देखने चलेंगे।" टीका बोला।

"ठीक है। पर इसकी ख़बर किसी को न हो! मां-बाप को भी मत बतलाना।" शेरु बोला।

"नहीं किसी को कानों-कान ख़बर न होगी। वरना वे हमको जाने नहीं देंगे।" टीका बोला।

"तो बात पक्की रही।" शेरु ने हाथ बढ़ाया। टीका ने उसके हाथ पर ताली मारी। बात पक्की हो गई।

दूसरे दिन बिल्कुल सुबह दोनों मिले। टीका ने पेड़ पर चढ़कर चारों ओर देखा। यह तय किया कि किस ओर चलना चाहिए। दोनों उस ओर चल पड़े। टीका रास्ते भर पेड़ों पर हूंप हूंपकर चढ़ जाता। उनके फल तोड़ता। फिर उनको खाता। शेरु बेचारा भूखा ही आगे बढ़ता गया। वे दोनों इस तरह चलते चले गए। चलते चले

गए। रास्ते में उनको काले बालों वाला एक जानवर मिला। डरते-डरते दोनों उसके पास पहुंचे।

शेरु बोला, "राम! राम!"

भालू मधु मक्खी का शहद पीकर आया था। अपने मुंह को चाटते हुए बोला "राम!राम!" क्या बात है?"

"क्या आप आदमी हैं।" टीका बोला।

भालू का मुंह बन गया। वह चिढ़कर बोला, "भाई मुझको गाली मत दो। मैं तो भालू हूं।"

"हम आदमी को देखने निकले हैं", शेरु बोला

भालू चौंककर बोला, "क्यों? क्यों? उसको देखने क्यों जा रहे हो, बिना बुलाए मुसीबत क्यों बुला रहे हो?"

"मुसीबत?" टीका बोला।

"और नहीं तो क्या। आदमी बड़ा ख़ुदगर्ज़ है। अपने मतलब के लिए वह कुछ भी कर सकता है। वह हमारी नाक में रस्सी डालकर हमको नचाता है। उससे पैसे कमाता है। हमारे मर जाने के बाद हमारी खाल को बेचता है। हमारी हड्डी, दांत और हमारे नाख़ून को बेचकर वह रुपए कमाता है।"

"तो वह बड़ा स्वार्थी है।"

"स्वार्थ के लिए उसने अपना ईमान तक बेच दिया है।"

भालू बोला, "धरती की छाती पर उसने अनेक कारखाने लगाए हैं। अपने मतलब की चीज़ें उनसे पैदा करता है। कारखानों से गंदा धुंआ निकलता है। चारों तरफ सांस लेना मुश्किल हो जाता है। सुना है अब यह संसार उसे कम पड़ने लगा है इसीलिए वह दूसरों के संसार में जाकर वहां गंदगी फैलाने की सोच रहा है।"

"अच्छा! तब तो उसे ज़रूर देखना चाहिए। भैया भालू वह रहता कहां है?" शेरु बोला।

"जंगल काट्-काटकर वह गांव और शहर बसाता है। वहीं ठाठ से रहता है।"

"और दिखता कैसा है?"

टीका की तरफ देखकर भालू बोला, "बंदर की तरह। कहते हैं कि पहले वह बंदर था। बंदर तो नीचे झुककर हाथ-पांव से चलता है। वह अपने पैरों पर खड़ा रहता है। हाथों से काम करता है।"

"ऐसा!" शेरु बोला।

"मेरी बात मानो बेटा। आदमी को देखने की बात को छोड़ो। अपने घर जाकर आराम करो। सुख से रहो।" भालू इतना कहकर चला गया।

शेरु बोला, "क्यों भाई टीका, क्या कहना है?"

टीका बोला, "भैया तुम तो बड़े डरपोक हो। अरे शेर होकर डरते हो।"

शेरु को जोश आ गया। वह अकड़कर आगे चलने लगा। उसके पीछे-पीछे टीका कूद-फांदकर बढ़ने लगा। वे चलते चले गए। चलते चले गए। थोड़ी दूर पर उनको एक जानवर मिला। वह झुककर घास खा रहा था।

शेरु बोला, "सलाम!"

जानवर ने कहा, "सलाम!" तुम लोग यहां? क्या बात है?"

"क्या आप आदमी हैं?" शेरु ने पूछा।

"आदमी का नाम न लो मैं तो गाय हूं।"

"हम लोग आदमी को देखने निकले हैं।"

"आख़िर क्यों? नाहक तुम लोग उस हत्यारे को खोज रहे हो? मेरी मानो घर लौट जाओ। वह एक बला है। मुसीबत है। उसे क्यों बुला रहे हो।"

"मुसीबत?" टीका बोला।

"और नहीं तो क्या। अब मेरी बात ले लो। पहले मैं वन में मज़े से रहती थी। दो पूले घास डालकर उसने मुझे ग़ुलाम बना लिया है। हमारा दूध निकालकर उसको बेचता है। दूध सुखाता है, डिब्बों में भरकर बेचता है। पैसा कमाता है। जब हम दूध देना बंद कर देते हैं तो वह हमें मारकर हमारी चमड़ी से जूते बनाता है। तरह-तरह की चीज़ें बनाता है। हाड़–मांस से शक्कर साफ़ करता है। उनसे खाद बनाता है। पैसा कमाता है।"

"अच्छा, पर दिखता कैसा है?" शेरु ने पूछा।

"सीधा! ऊंचा! कंधे के ऊपर उसका सर

रहता है। कंधे से ही दो हाथ लटकते रहते हैं। उसके सर पर बाल रहते हैं। दो आंखों के बीच एक नाक होती है। कमर के नीचे दो पैर होते हैं। और जब वह पास आता है तो..........।"

इतना कहकर गाय पूंछ उठाकर जंगल में भाग गई। मानो आदमी से घबरा गई हो। टीका बोला, "भैया शेरु क्या विचार है? आगे चलना है।"

"हम इतनी दूर आ गए हैं? क्या बिना देखे चले जाएं? आख़िर उसमें ऐसा क्या है? देखने में बुरा क्या है?" शेरु बोला।

वे दोनों आदमी को देखने फिर आगे बढ़े। चलते चले गए। चलते-चलते उनको एक ऊंचा-सा टीला दिखाई दिया। गाय ने जैसा बतलाया था वह कुछ-कुछ वैसा ही दिखता था। शेरु बोला, "नमस्ते! भैया!"

टीला कुछ न बोला। बंदर के बच्चे ने उसके ऊपर चढ़कर उसको हिलाया।

टीला बोला, "कौन है भाई! ठीक से सोने भी नहीं देते।"

"भैया हम हैं।" शेरु बोला, "और यह है मेरा दोस्त टीका। हम लोग आदमी को देखने निकले हैं।"

आदमी का नाम सुनते ही टीला तेज़ी से कांपने लगा। बोला, "भैया तुम लोग वापस जाओ। उसका नाम न लो।"

"तुम तो उसके नाम से ही कांपने लगे।" शेरु बोला।

"तुमने उसकी करतूतों को नहीं देखा इसलिए तुम उससे नहीं डरते।" टीला बोला।

"अच्छा।" टीका बोला।

"देखो भैया, मुझमें जान नहीं। फिर भी वह अत्याचारी मेरे दिल में मशीनें चला-चला कर हर जगह मुझमें छेद करता है।" टीला बोला।

"किसलिए?" शेरु ने उत्सुकता से पूछा।

"वह मेरे अंदर से तेल निकालता है। पानी निकालता है। तरह-तरह के खनिज पदार्थ निकालता है। इन सबको वह बेचता है। बड़ी-बड़ी गोल-गोल बंद नालियों से बहुत दूर ले जाकर तेल को साफ करता है। चारों ओर धुंआ उड़कर लोगों के सांस लेने में अड़चनें पैदा करता है।"

"इस तरह तो वह ख़ुद अपना दुश्मन बन जाएगा।" शेरु बोला।

"तब ऐसे मूरख जानवर को हम ज़रूर देखेंगे।" टीका बोला।

टीले को वहीं सोता छोड़ वे आगे बढ़े। रास्ते में उनको जो भी मिलता वह आदमी की बुराई करता। हर कोई आदमी के नाम से कांप जाता। उससे डरता। उन सबकी हालत को देखकर शेरु और टीका ने निश्चय किया कि वे एक बार आदमी को ज़रूर देखेंगे।

वे आगे बढ़े। बढ़ते चले गए। उन्होंने देखा नदियों पर ऊंची दीवार बांधी गई है। पानी के बहाव को बदल दिया गया है। ऊपर से पानी गिराकर बिजली पैदा की जा रही है। लेकिन वे बिना डरे आगे बढ़ते गए। उन्होंने दूर एक "ठूंठ" को देखा। उसकी दो शाखाएं हाथ फैलाए हुए थीं।

उन्होंने पूछा, "भाई, क्या तुम आदमी हो?"

"नहीं भाई, मैं तो हरे भरे पेड़ का ठूंठ रह गया हूं।"

"किसने तुम्हारा यह हाल किया है?"

"जिसे तुम देखने निकले हो।"

"आदमी ने?"

"हां! उसी ने मुझ पर बेरहमी से कुल्हाड़ी चलाई है। मेरे अंग-अंग को काटा है। अंग से निकली लकड़ियों को सुखाकर वह जलाता है। घर में लगाता है।"

"बड़ा चतुर है?"

"हां। लेकिन वह यह नहीं जानता कि इस तरह जंगलों को काट-काट कर वह ख़ुद अपने लिए मुसीबत खड़ी कर रहा है?"

"वो कैसे?"

"पेड़ों के कारण ही वर्षा होती है। आस-पास का तापमान सामान्य बना रहता है। मनुष्य द्वारा सांस

से निकली गंदी वायु को हम ही हज़म कर सकते हैं। फिर उसको जीने के लिये ज़रूरी हवा देते हैं।"

"आप तो उसके काम के हैं। फिर वह आपको बरबाद करने पर क्यों तुला है?"

"क्योंकि अपने स्वार्थ के आगे उसे कुछ दिखाई ही नहीं देता।"

"वह मिलेगा कहां?"

"उसके पास क्यों जाते हो?"

"नहीं, नहीं हम तो उसको दूर से देखना चाहते हैं।"

"फिर तुम आगे बढ़ना। पास ही वह मिलेगा।

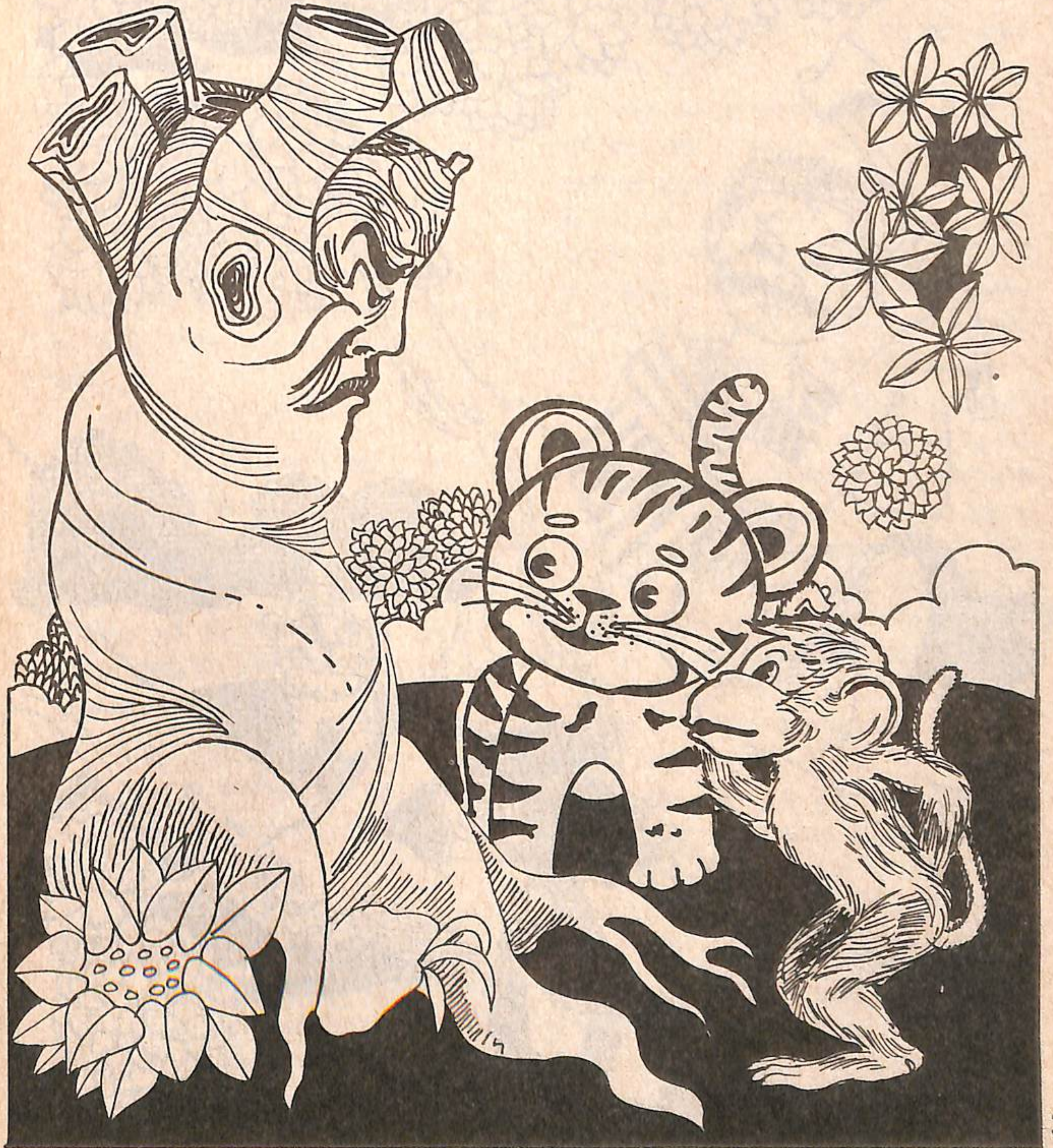

पेड़ पर चढ़कर शायद लकड़ी काटते हुए वह मिलेगा। या फिर किसी मकान में मशीन चलाता हुआ।"

"धन्यवाद भाई।" शेरु बोला।

"उसके नज़दीक मत जाना बच्चा।" ठूंठ बोला।

"नहीं! नहीं!" कहते हुए टीका हूप हूप करता

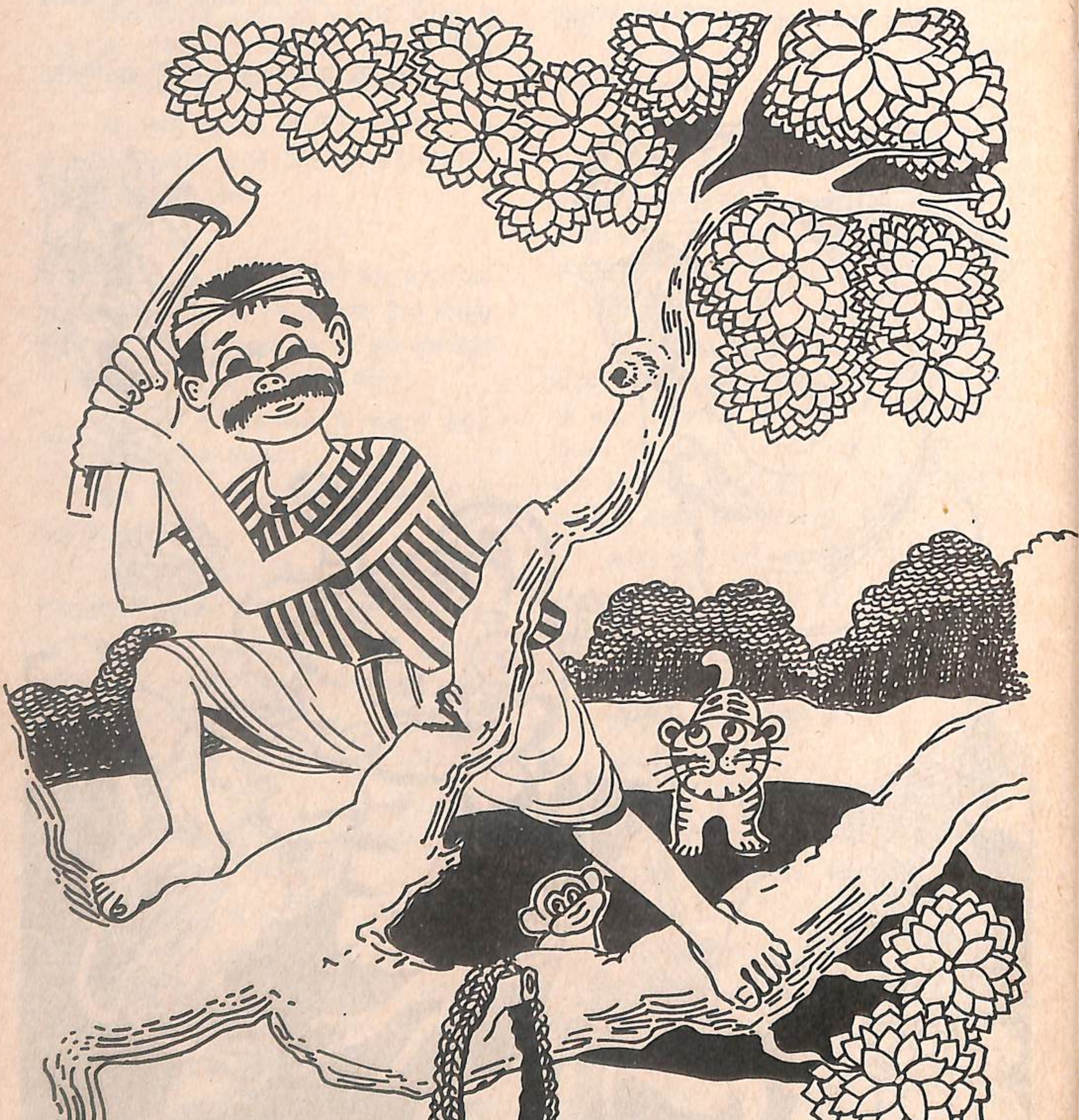

आगे बढ़ने लगा। शेरु उसके पीछे चलने लगा।

वे दोनों आगे बढ़ते गए। थोड़ी दूर चलने पर उनको कोई पेड़ पर चढ़ा दिखाई दिया। टीका ने दूर से हाथ से दिखलाया। शेरु ने देखा। उसके हाथ में एक कुल्हाड़ी है। उससे वह पेड़ की शाखाएं काट-काट कर नीचे गिरा रहा है। उसके पास ही एक शाखा पर रस्सी रखी हुई है। रस्सी को गोल-गोल घुमाकर शाखा पर लटका रखा है। शेरु उत्तेजित होकर आगे बढ़ा। वह पेड़ के नीचे गया। ऊपर देखकर वह ज़ोर से बोला।

"सुनो! सुनो! सुनो!"

आदमी ने नीचे देखा। शेर का बच्चा उससे पूछ रहा है। वह बोला, "कहो! कहो! कहो!"

"ज़रा नीचे आओ।"

आदमी ने कुल्हाड़ी पीछे लटकाई। गोल रस्सी को उठाया कंधे पर डाला। पेड़ से नीचे उतरा। वह शेरु से दूर जाकर खड़ा हो गया? उसने पूछा, "बोलो!"

"क्या तुम आदमी हो?"

"तुम तो जंगल के राजा के बच्चे हो?"

"हां!" तुमने मुझे पहचान लिया।

"तुमको कौन नहीं जानता। तुम्हारे पिताजी से सभी डरते हैं।"

शेरु मन ही मन खुश हुआ। आदमी ने धीरे-धीरे रस्सी की तरफ हाथ बढ़ाया। वह उससे खेलने का अभिनय करने लगा।

"तो तुम आदमी हो?"

"हां! पर तुम मुझको क्यों ढूंढ रहे हो?"

"तुम होशियार जो हो! लोग तुम्हारी बहुत तारीफ़ करते हैं।" शेरु बोला।

"पर तुम्हारे पिताजी से मुझको डर लगता है। इसीलिए तुमसे भी मुझको डर लगता है। कहते हुए आदमी ने रस्सी घुमाई और शेरु की तरफ फैंकी। रस्सी का फंदा शेरु के गले में डाला। आदमी ने झटका दिया। शेरु को उसने फांस लिया। शेरु ज्यों ही डर कर पीछे हटता उसके गले का फंदा कसता जाता। आदमी ज़ोर से हंसने लगा। बाद में वह बोला, "अरे मूर्ख शेर के बच्चे। तूने आदमी नहीं देखा था। अब अच्छी तरह से देंख ले। तुझको मैं सरकस में बेच दूंगा। सरकस वाले तुझको हंटर से सीधा कर देंगे। हंटर फटकार कर कहेंगे, यहां बैठ। तू वहां बैठेगा। उनके कहने पर तू तरह-तरह के करतब दिखाएगा। लोग तेरे करतबों को देखकर खुश होंगे।"

"देख मुझे छोड़ दे नहीं तो मेरा बाप आकर तुझको खा जाएगा।"

"अरे चल हट तेरे बाप को ज़िंदा पिंजड़ों में कई बार पकड़ा है। चल।" इतना कहकर आदमी ने रस्सी को झटका दिया। शेरु के गले में रस्सी ज़ोर से फंस गई। शेरु को लगा उसकी सांस निकल जाएगी। वह रस्सी से बंधा आदमी के पीछे-पीछे चलने लगा। कभी-कभी वह छूटकर भागना चाहता। आदमी लकड़ी से उसकी पिटाई करता। शेरु लाचार होकर आदमी के इशारों पर चलने लगा।

टीका शेरु का हाल देखकर दुखी हो रहा था। वह दूर एक पेड़ पर बैठा था। वह सोच रहा था शेरु को कैसे छुड़ाया जाए? लेकिन उसको कुछ समझ में नहीं आ रहा था। एकाएक वह उठा। एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर कूदता-कूदता आदमी के सामने चलने लगा। पेड़ों के नीचे उसने पगडंडी देखी। उसे लगा आदमी इसी पर से आगे जाएगा। पगडंडी के ऊपर एक घने पेड़ पर बैठकर वह आदमी का इंतजार करने लगा। आदमी पगडंडी से होता हुआ उसी पेड़ के नीचे से निकला। टीका आदमी पर कूद गया। आदमी ज़मीन पर गिर गया। वह डर गया। उसे लगा उसके ऊपर से न जाने क्या गिर गया है। घबराहट और डर से उसके हाथ की रस्सी छूट गई। टीका कूदकर दूर खड़ा हो गया। उसने शेरु से कहा,

"भागो।"

शेरु तेज़ी से जंगल की तरफ भागा। टीका भी "हूप-हूप" करते हुए कूद-कूद कर उसके पीछे भागने लगा। कभी शेरु की रस्सी क़िसी पेड़ में फंस जाती। टीका उसे तुरंत निकाल कर शेरु को भागने को

कहता। आदमी उन लोगों के पीछे भागा। पर वे लोग तेज़ी से भाग रहे थे। आदमी भागते-भागते थक गया। हांफते हुए वह एक पत्थर पर बैठ गया। टीका ने पीछे घूमकर देखा। आदमी उससे बहुत दूर था उसने शेरु के गले की रस्सी का फंदा ढीला किया। शेरु की जान में जान आई। वह बोला,

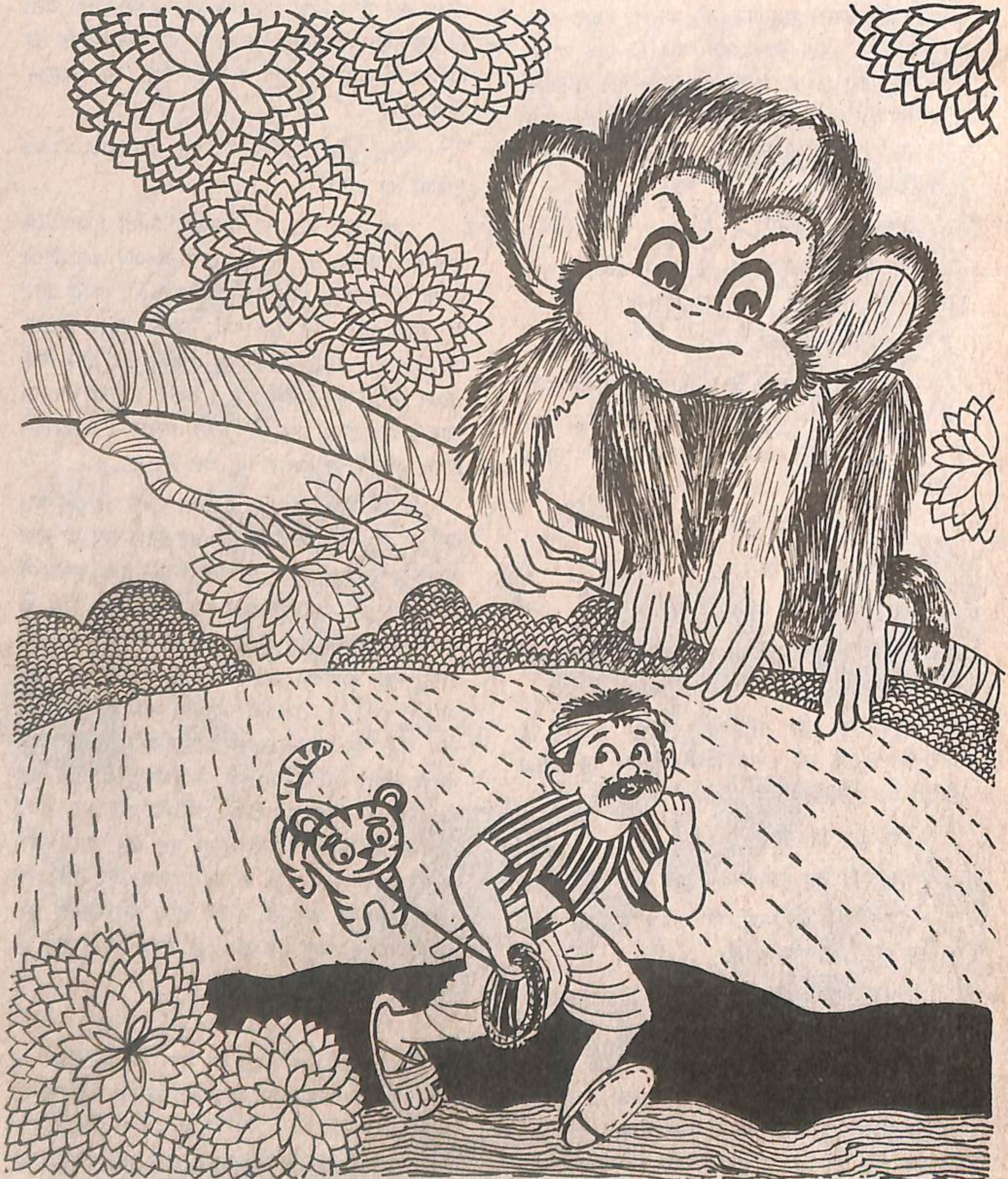

"भैया मां ठीक ही कहती थी। आदमी से हमेशा डरा करो। आज तुम न होते तो मेरी मुसीबत हो जाती।"

"पर एक बात सच है।" टीका बोला।

"कौन-सी?" शेरु बोला।

"आदमी ने अपने मतलब के लिए न जाने कितनी चीज़ें बनाई हैं। उसने अपनी सुविधा की कितनी चीज़ें निकाल ली हैं। मानना पड़ेगा, उसमें बड़ी अकल है।" टीका बोला।

"आख़िर बंदर की संतान जो है।" शेरु बोला।

"अगर वह सचमुच अपनी अकल से काम ले। अपनी भलाई के साथ वह अपने चारों ओर की चीज़ों से तालमेल बनाकर रखे तो उसकी अकल का असली फ़ायदा है।" शेरु बोला।

"अच्छा।" टीका बोला।

"लेकिन लगता है वह अंधा हो गया है। उसे केवल अपनी भलाई से मतलब है। दूसरों से तालमेल की ज़रूरत वह नहीं समझता। इसलिए एक दिन वह ज़रूर अपना ही सर्वनाश करेगा। "शेरु बोला।

"अब चलें। देखो अपनी छाया लंबी होती जा रही है। जल्दी रात होगी।" टीका बोला।

दोनों तेज़ी से अपने-अपने घर की तरफ जाने लगे।

❑ कृ.शि. मेहता

सभी चित्र : विवेक

माथापच्ची : उत्तर मई, 92 अंक के

1. एक भी तीली नहीं हटानी पड़ेगी। बस तुम आकृति को ध्यान से देखो। तुम्हें उसी में छह वर्ग दिखाई देंगे।

2. जाली में अंकों को इस तरह जमाया जा सकता है-

2243	1341	3142
3141	2242	1343
1342	3143	2241

कालमों का जोड़ 6726 आएगा।

3.

4. 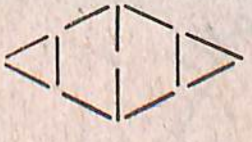

5. 12 और 24 इंच।

6. 12 बजकर 25 मिनट।

7. तरबूजों का वज़न था, 2.5, 4, 5.5, 7.5 तथा 8 किलोग्राम।

खबर यह है...

क्यों.. क्यों.. 16 में हमने जो सवाल पूछा था, तुम्हें याद ही होगा। पर इस सवाल का जवाब इस अंक में नहीं दे रहे हैं। उसे तुम जुलाई, 92 में पढ़ सकोगे। और इस बार के सवाल की भी छुट्टी!

तुम्हें यह भी याद होगा कि, पिछले अंक में हमने घोषणा की थी कि अब वर्ग पहेली के सर्वशुद्ध हल भेजने वालों को तीन माह तक चकमक उपहार में भेजी जाएगी। इस बात को ध्यान में रखते हुए अब वर्ग पहेली का हल अगले अंक की बजाय उसके बाद वाले अंक में प्रकाशित होगा। ताकि तुम अपना हल भेज सको। वर्ग पहेली-13 का हल भी, जो इस अंक में प्रकाशित होना था, अब अगले अंक में प्रकाशित होगा।

-संपादक

एक मज़ेदार खेल

उलझन सुलझाओ

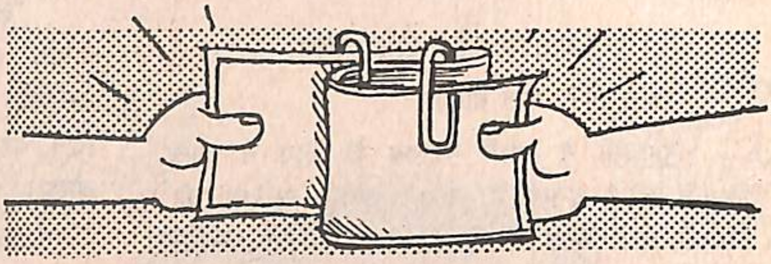

इस बहुत ही आसान पर मज़ेदार खेल के लिए तुम्हें काग़ज़ में लगने वाले दो यू-पिन और थोड़े-मोटे, सख़्त काग़ज़ की एक पट्टी की ज़रूरत पड़ेगी। काग़ज़ की पट्टी किसी नए करारे नोट की तरह हो तो अच्छा रहेगा। पर इस खेल के लिए नोट मत ले लेना क्योंकि उसके फटने का डर रहेगा।

काग़ज़ की पट्टी को 'S' आकार में मोड़ लो। अब दोनों यू- पिनों को दो तरफ से ऐसे लगाओ ताकि दोनों पिनों में काग़ज़ की दो-दो परतें आएं **(चित्र देखो)**।

अब उस मुड़ी हुई पट्टी के दोनों छोरों को कसकर पकड़ो और फिर एक झटके में ऐसे खींचो कि पट्टी सीधी हो जाए। यह क्रिया एक झटके में ही होनी चाहिए।

क्या हुआ? दोनों यू-पिन उड़ गए? उन्हें उठाकर देखो....वो आपस में उलझ गए हैं। ऐसा क्यों हुआ?

सुमित कुमार, सात वर्ष, बिलासपुर

सिद्धार्थ अग्रवाल, भोपाल

पंजीयन क्रमांक 50309/85 के अंतर्गत भारत के समाचार-पत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा पंजीकृत। डाक पंजीयन क्रमांक BPL/DN/MP/431/92

योगेश्वर प्रसाद, टेंगनमाड़ा, बिलासपुर

रेक्स डी रोजारियो की ओर से विनोद रायना द्वारा राजकमल ऑफसेट प्रिंटर्स, भोपाल से मुदित एवं एकलव्य, ई-1/208, अरेरा कालोनी, भोपाल-462016 से प्रकाशित।
संपादक : विनोद रायना